श्रीगणेशाय नमः

घुपाराशरी

डुदायप्रदीपाभिधा

व्याकरणाचार्य-पण्डित-मदनमोहन पाठककृत-
संस्कृतान्वयभाषानुवादसहिता ।

व्याकरणाचार्य 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसाद व्यासेन
विषमस्थलोदाहरण-दशाचक्र-दशाफलादिभिः
सनाथीकृत्वा संशोधिता च ।

प्रकाशक—
भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी १.

मूल्य ।।।)

श्रीगणेशाय नमः

लघुपाराशरी

उडुदायप्रदीपाभिधा

व्याकरणाचार्य-पण्डित-मदनमोहन पाठककृत-
संस्कृतान्वयभाषानुवादसहिता ।

व्याकरणाचार्य 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादेन
विषमस्थलोदाहरण-दशाचक्र-दशाफलादिभिः
सनाथीकृता संशोधिता च ।

प्रकाशक-

भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी १.

सन् १९५७ ई०]  [मूल्य ॥-)

❋ प्रस्तावना ❋



ज्यौतिषशास्त्र से जिन्हें थोड़ा भी सम्बन्ध है, उनमें उन लोगों की संख्या बहुत न्यून होवेगी जो लघुपाराशरी से परिचित न होवें। यह ग्रन्थ बड़ा प्रामाणिक और सर्वमान्य है। इसके तत्त्वों को जानने वाले विद्वान् ज्यौतिषियों का कथन है कि 'यह ग्रन्थ लघु होने पर भी बड़ा ही गहन है'। इस ग्रन्थ में चार अध्याय हैं, संज्ञाध्याय, राजयोगाध्याय, आयुर्दायाध्याय और अन्तर्दशाध्याय, तनु, धन इत्यादि संज्ञाओं की विशेष संज्ञा है। राजयोगाध्याय में आयुष्य और मारकेश के फलाफल का निरूपण है, और अन्तर्दशाध्य में सूर्यादि ग्रहों की अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर्दशा का निरूपण है।

इन चारो अध्यायों के विषय पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि फलित ज्यौतिष संसार का कोई विद्वान् इस ग्रन्थ का उत्तम रीति पर अभ्यास करेगा, तो अवश्य ही इन विषयों में एक अच्छा भविष्यद्वक्ता ज्यौतिषी होवेगा। यह विचार कर बनारस 'भार्गवपुस्तकालय' के मैनेजर ने मुझे इस ग्रन्थ का भाषानुवाद करने को कहा। मैंने मूल के साथ सरल संस्कृत के अन्वय और भाषानुवाद को मिलाकर ग्रन्थ तैयार कर दिया है।

मैं कोई ज्यौतिषी नहीं हूँ, सम्भव है कि इसमें अनेक त्रुटियाँ रह गई हों। विद्वज्जन उसे सुधार लेवेंगे। यह ग्रन्थ भाषा में केवल मेरे समान अल्पज्ञजनों के बोधार्थ लिखा गया है। वास्तविक में यदि इसे गुरु से पठित पाठानुपूर्वी कहें तो अनुचित न होवेगा।

२२।४।१९०७ }

पं० मदनमोहन पाठक
गायघाट, बंगालीबाड़ा
वाराणसी।

श्रीगणेशाय नमः

लघुपाराशरी ।

संस्कृतान्वयभाषाटीकासहिता ।



विश्वेशपादयुगलं प्रणिपत्य सम्यक् ।
शैलात्मजां सतनयां दिननायकं च ॥
होरां पराशरमुनेर्विशदीकरोमि ।
भाषामयैः सुललितैः पदसन्निवेशैः ॥ १ ॥

ग्रन्थ में कौनसा विषय है ? इससे कौनसा प्रयोजन सिद्ध होता है ? ग्रन्थ के अनेक विषयों का परस्पर ग्रन्थ के साथ कौन सा सम्बन्ध है ? और इसका अधिकारी कौन है ? इन चारों बातों को प्रकट करने के लिये प्राचीन विद्वानों ने मङ्गलाचरण करने का सम्प्रदाय बांधा है। इसमें पहिले आधे भाग से मङ्गल करके उसके द्वारा विघ्नों का नाश स्वीकार करते हैं, और शेष आधे भाग से उपरोक्त चारों बात स्वीकार करते हैं। इन चारों में विषय, प्रयोजन और अधिकारी का प्रतिपादन बहुधा ग्रन्थकार मङ्गलाचरण में कर देते हैं। सम्बन्ध के विषय में उनका सिद्धान्त है कि ग्रन्थ का और उसके विषयों का परस्पर प्रतिपाद्य और प्रतिपादक सम्बन्ध है। विषयों का प्रतिपादन किया जाता है और ग्रन्थ का उनका प्रतिपादन करते हैं। इससे उसके विषय में ग्रन्थकार कुछ विशेष उद्योग नहीं करते। वह ग्रन्थ के देखने से ही विदित हो जाता है। यह नियम सब ग्रन्थों में पाया जाता है। इसी सार्वजनिक नियमानुसार

महर्षि पराशर उडुदायप्रदीप (लघुपाराशरी) ग्रन्थ के प्रारम्भ में मङ्गलाचरण करते हैं–

सिद्धान्तमौपनिषदं शुद्धान्तं परमेष्ठिनः ।
शोणाधरं महः किञ्चिद्वीणाधरमुपास्महे ॥ १ ॥

(अन्वयः) वयम् औपनिषदं सिद्धान्तं, परमेष्ठिनः शुद्धान्तं, शोणाधरं वीणाधरं किञ्चित् महः उपास्महे ॥ १ ॥

अर्थः—श्रुतियों का सिद्धान्त, प्रजापति का शुद्ध अन्तःपुर बिम्बा फल के समान लाल अधरवाले, और वीणा धारण करने वाले, किसी तेज की मैं आराधना करता हूँ। तात्पर्य यह है कि, ग्रन्थकार सरस्वती देवी की उपासना करने के लिये कहते हैं कि—वह वेदान्तों का सिद्धान्त है, ब्रह्मा की गृहिणी है, अधर अत्यन्त लाल वर्ण का है और कच्छपी नामक वीणा को धारण किये है-इससे उसकी आराधना मङ्गल है ॥ १ ॥

वयं पाराशरीं होरामनुसृत्य यथाविधि ।
उडुदायप्रदीपाख्यं कुर्मो दैवविदां मुदे ॥ २ ॥

(अन्वयः) वयं पाराशरीं होरां अनुसृत्य दैवविदां मुदे यथाविधि उडुदायप्रदीपाख्यं ग्रन्थं कुर्मः ॥ २ ॥

अर्थः—मैं पराशर महर्षि के होरा—शास्त्र को, अपनी मति के अनुसार विचार कर ज्यौतिषियों के आनन्द के लिये अश्विनी आदि नक्षत्रों के फलों को सूचन करने वाला 'उडुदायप्रदीप' ग्रन्थ का सम्पादन करता हूँ ॥ २ ॥

फलानि नक्षत्रदशाप्रकारेण विवृण्महे ।
दशा विंशोत्तरी चात्र ग्राह्या नाष्टोत्तरी मता ॥ ३ ॥

(अन्वयः) "वयम्" नक्षत्रदशाप्रकारेण फलानि विवृण्महे । अत्र च दशा विंशोत्तरी ग्राह्या, अष्टोत्तरी "अत्र" न मता ॥ ३ ॥

अर्थः—मैं इस ग्रन्थ में नक्षत्र दशा के भेद से प्राणियों के सुख और दुःखों का व्याख्यान करूँगा। परन्तु इस ग्रन्थ में विंशोत्तरी दशा ली जावेगी, अष्टोत्तरी (योगिनी) दशा मुझे सम्मत नहीं है।

जन्मनक्षत्रतः दशाबोधकचक्र—

सू. ६	चं० १०	मं ७	रा. १८	बृ. १६	श. १९	बु. १७	के. ७	शु. २०	ग्रहाः वर्षाः
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	आ.	म.	पू. फ.	नक्षत्राणि
उ. फ.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	
उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ.भा.	रेव.	अ.	भर.	

इस स्थान पर प्रसंग से दशा उसकी अन्तर्दशा आदि का विचार कर देना अनुचित न होगा। ज्यौतिष शास्त्र के विद्वान् विंशोत्तरी दशा के विषय में लिखते हैं कि—

["दशा चान्तर्दशा चैव विदिशोपदशा तथा। प्राणाख्या च फलं तासां वदेच्छास्त्रानुसारतः ॥" दशा १, अन्तर्दशा २, विदिशा (प्रत्यन्तर्दशा) ३, उपदशा (सूक्ष्मदशा) ४, और प्राणदशा ५, ये ५ प्रकार के होते हैं इनका फल शास्त्रानुसार कहै।]

"तनु ६ नय १० सित ७ जाया १८ तोपि १६ धान्या १९ सटा १७ सा ७ नख २० इति गदिता सा भास्करादिक्रमेण"

इस श्लोक से सूर्य आदि ग्रहों की दशा स्पष्ट होती है। सूर्य आदि ग्रहों का क्रम यह है—सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु और शुक्र, ये ग्रह दशा के स्वामी हैं। दशा लगाने का क्रम यह है कि अश्विनी आदि नक्षत्रों में से अश्विनी और भरणी को छोड़कर कृत्तिका से प्रारम्भ कर जन्म नक्षत्र तक की संख्या गिन लेवे फिर उस गिनी संख्या में नव से भाग देवे। जो शेष बचे वही ग्रह की दशा होवेगी, अर्थात् कृत्तिका से प्रारम्भ करने पर जो ग्रह जन्म नक्षत्र में होवेगा प्रथम उसकी दशा होवेगी। इस प्रकार कृत्तिका उत्तराफल्गुनी और उत्तराषाढ़ में जन्म होने से सूर्य की दशा छः वर्ष की होती है। रोहिणी, हस्त और श्रवण नक्षत्र में जन्म होने से दस वर्ष की चन्द्रमा की दशा होती है। इसी प्रकार मंगल की सात वर्ष की, राहु की अठारह वर्ष, बृहस्पति की सोलह वर्ष, शनि की उन्नीस वर्ष, बुध की सत्रह वर्ष, केतु की सात वर्ष और शुक्र की बीस वर्ष की दशा होती है। जैसा कि उपरोक्त चक्र

में स्पष्ट किया है। इनमें भुक्त दशा से कुछ फल नहीं है इससे भोग्य दशा का फल कहना उचित है। उसका प्रकार यह है कि अपने जन्म की दशा को जन्म नक्षत्र की घडियों से गुन देना, फिर जन्म नक्षत्र की घड़ियो से भाग देने पर जो बचे वह भुक्त दशा होती है और जो बचे वह भोग्य दशा होती है। भुक्त वर्षों में भाग देने से जो शेष रहें उसका फल कहना। इससे अन्तर्दशा का ज्ञान होता है। अन्तर्दशा के जानने का यह उपाय है कि जिस दशा की अन्तर्दशा बनाना हो उस दशा को तीन से गुणाकर जो लब्ध होवे उसे फिर तीन से गुणन करे, फिर तीन का भाग देने से जो शेष रहे वही अन्तर्दशा के मास आदि होते हैं। जैसे सूर्य की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा लाना हेवे तो उसकी दशा के छः वर्ष को तीन से गुणे तब अठारह होवेंगे, उन्हें फिर छः से गुणने पर एक सौ आठ होता है,—यहाँ तीस से भाग देने पर तीन मास और अठारह दिन की सूर्यदशा में सूर्य की अन्तर्दशा होती है। छः महीना चन्द्रमा की, चार महीना छः दिन मंगल की, दश महीना चौबीस दिन राहु की, नव महीना अठारह दिन बृहस्पति की, ग्यारह महीना और बारह दिन शनि की, दश महीना छः दिन बुध की और चार महीना छः दिन केतु की अन्तर्दशा होती है। यह सूर्य की दशा जानने का उपाय है। इसी भाँति और-और ग्रहों की महादशा में अन्तर्दशा होती है। दशा और अन्तर्दशा के जानने के अनेक उपाय ग्रन्थों में लिखे हैं ॥ ३ ॥

उदाहरण—

संवत् १९९३ शक १८५८ फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी गुरुवार को इष्टकाल ४।१४ है उस दिन जन्मनक्षत्र धनिष्ठा का भयात ५५।१ और भभोग ६०।९ हुआ तथा स्पष्ट सूर्य १०।२७।१३।२२ है। कृत्तिका से धनिष्ठा २१ हुआ। उसमें ९ का भाग दिया तो ३ शेष रहा इसलिये मङ्गल की दशा में जन्म हुआ। भयात ५५।१ का पल ३३०१ हुआ इसको ७ से गुणा किया और पलात्मक भभोग ३६०९ का भाग दिया तो भुक्त वर्षादि ६।४।२४।५६।१५ हुआ इसको मंगल के वर्ष ७ में घटा दिया तो भोग्य वर्षादि ०।७।५।३।४५ हुआ।

विंशोत्तरीदशाचक्र—

मं०	रा०	बृ०	शं०	बु०	कें०	शु०	सू०	च०	ग्रह
०	१८	१६	१९	१७	७	२०	६	१०	वर्ष
७	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
५	०								दिन
३									घ०
४५									प०
सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०
१९९३	१९९४	२०१२	२०२८	२०४७	२०६४	२०७१	२०९१	२०९७	२१०७
सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०
१०	६	६	६	६	६	६	६	६	६
२७	२	२	२	२	२	२	२	२	२
१३	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७
२२	७	७	७	७	७	७	७	७	७

अन्तर, प्रत्यन्तर, सूक्ष्म और प्राणदशा बनाने का क्रम महादशेश के वर्ष में या अन्तर्दशादिकों के मान में १२० का भाग देने से ध्रुव अर्थात् १ वर्ष का प्रमाण होता है। अथवा दशेश के वर्ष का तिगुना दिन अन्तर्दशा के लिये ध्रुवा होती है। दशा और अन्तर्दशा के स्वामियों के वर्षों के गुणन फल में ४० का भाग देने से प्रत्यन्तर्दशा के लिए दिनादि ध्रुवा होगी। दशेश अन्तर्दशेश और प्रत्यन्तर्दशेश के वर्षों के घात में ८० का भाग देने से सूक्ष्मदशा के लिये घट्यादि ध्रुवा होती है। इसी तरह दशा अन्तर प्रत्यन्तर और सूक्ष्मदशा के स्वामियों के वर्ष के गुणन फल में १६० का भाग देने से प्राणदशा के लिये पलादि ध्रुवा होगी।

ध्रुवा से अन्तर्दशा आदि बनाने की रीति—ध्रुवा को १० से गुणने से चन्द्र का और ६ से गुणने से सूर्य का दशामान होता है।

सूर्य चन्द्र का योग गुरु का होता है। गुरु में ध्रुवा जोड़ने से बुध का। बुध में जोड़ने से राहु का। राहु में जोड़ने से शनि का। शनि में ध्रुवा जोड़ने

से वा चन्द्रमा का दूना शुक्र का मान होता है । सूर्य में ध्रुवा जोड़ने से मंगल और केतु का होता है । अन्तर तथा प्रत्यन्तर को जोड़ने का क्रम—वर्ष को संवत् में और मास आदि को सूर्य के राश्यादि में जोड़ना चाहिये ।

सूर्य की दशा में अन्तर्दशा

सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	०	वर्षादि
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	१८	

चन्द्रमा की दशा में अन्तर्दशा

सू.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ध्रु.	ग्रह
०	०	१	१	१	१	०	१	०	०	
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	१	वर्षादि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

मंगल की दशा में अन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं	ध्रु	ग्रह
०	१	०	१	०	०	१	०	०	०	
४	०	११	१	११	४	२	४	७	०	वर्षादि
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	२१	

राहु की दशा में अन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म	ध्रु.	ग्रह
२	२	२	२	१	३	०	१	१	०	
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	१	वर्षादि
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	२४	

बृहस्पति की दशा में अन्तर्दशा

बृ.	श.	बु	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	ध्रु.	ग्रह
२	२	२	०	२	०	१	०	२	०	
१	६	३	११	८	९	४	११	४	१	वर्षादि
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	१८	

शनि की दशा में अन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ	भु.	ग्रह
३	२	१	३	०	१	१	२	२	०	
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	१	वर्षादि
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	२७	

बुध की दशा में अन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श	भु.	ग्रह
२	०	२	०	१	०	२	२	२	०	
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	१	वर्षादि
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२१	

केतु की दशा में अन्तर्दशा

के	शु.	सू.	चं.	मं	रा.	बृ.	श.	बु	भु.	ग्रह
०	१	०	०	०	१	०	१	०	०	
४	२	४	७	४	०	११	१	११	०	वर्षादि
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२१	२१	

शुक्र की दशा में अन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	के.	बु.	भु.	ग्र.
३	१	१	१	३	२	३	२	१	०	
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	२	वर्षादि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

सूर्य की दशा और सूर्य ही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	भु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
५	९	६	११	१४	१७	१५	६	१८	०	मासादि
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	५४	

सूर्य की दशा और चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तदशा

चं.	मं	रा.	बृ.	श.	बु	के.	शु.	सू.	भु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	१	मासादि
[illegible]	[illegible]	०	०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	०	[illegible]	

सूर्य की दशा में मङ्गल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु.	प्र
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	१	
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	३	

सूर्य की दशा में राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	भु.	प्र.
१	१	१	१	०	१	०	०	०	०	मासादि
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८	२	
३६	३२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	४२	

सूर्य की दशा में गुरु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	भु	प्र.
१	१	१	०	१	०	०	०	१	०	मासादि
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	२	
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	२४	

सूर्य की दशा में शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ	भु.	प्र.
१	१	०	१	०	०	०	१	१	०	मासादि
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	२	
९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६	५१	

सूर्य की दशा में बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के	शु.	सू.	चं	मं.	रा.	बृ.	श.	भु.	प्र.
१	०	१	०	०	०	१	१	१	०	मासादि
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	२	
२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	२७	३३	

सूर्य की दशा में केतु के अन्तर में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	भु.	प्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	१	
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	३	

सूर्य की दशा में शुक्र के अन्तर में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ध्रु.	ग्र.
२	०	१	०	१	१	१	१	०	०	मासादि
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	३	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

चन्द्रमा की दशा और चन्द्रमा ही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ध्रु.	ग्रह
०	०	१	१	१	१	०	१	०	०	मासादि
२५	१०	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	२९	
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	३०	

चन्द्रमा की दशा, मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	ध्रु.	ग्रह
०	१	०	१	०	०	१	०	०	०	मासादि
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	१	
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	४५	

चन्द्रमा की दशा, राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा	बृ.	श.	बु.	क.	शु.	सू.	च.	मं.	ध्रु.	ग्रह
२	२	२	२	१	३	०	१	१	०	मासादि
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	४	
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	३०	

चन्द्रमा की दशा, बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ध्रु.	ग्रह
२	२	२	०	२	०	१	०	२	०	मासादि
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	४	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

चन्द्रमा की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ	ध्रु.	ग्रह
३	२	१	३	०	१	१	२	२	०	मासादि
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	४	
१५	५५	१५	०	४०	३०	१५	३०	०	४५	

चन्द्रमा की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	भु.	ग्रह
२	०	२	०	१	०	२	२	२	०	मासादि
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	४	
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	१५	

चन्द्रमा की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	भु	ग्रह
०	१	०	०	०	१	०	१	०	०	मासादि
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	१	
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	४५	

चन्द्रमा की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	भु.	ग्रह
३	१	१	१	३	२	३	२	१	०	मासादि
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	५	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

चन्द्रमा की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	भु	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	मासादि
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	१	
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	३०	

अथ मंगल की दशा और मंगल ही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	१	
३४	३	२१	१६	४९	३४	३०	२१	१५	१२	
[illegible]	[illegible]	०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	०	०	०	३०	

मंगल की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	धु.	ग्रह
१	१	१	१	०	२	०	१	०	०	मासादि
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	३	
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	९	

मंगल की दशा बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	धु.	ग्रह
१	१	१	०	१	०	०	०	१	२	मासादि
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	२	
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	

मंगल की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	धु.	ग्रह
२	१	०	२	०	१	०	१	१	०	मासादि
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१९	
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	

मंगल की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	धु.	ग्रह
१	०	१	०	०	०	१	१	१	०	मासादि
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२	
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	५८	
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	

मंगल की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	धु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	१	
१४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	१३	
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	

मंगल की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	सू	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ध्रु.	ग्रह
२	०	१	०	२	१	२	१	०	०	मासादि
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	३	
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	३०	

मंगल की दशा और सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तदशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	१	
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	००	३	

मंगल की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ध्रु.	ग्रह
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	मासादि
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१	
३०	१५	३०	०	१५	५४	१५	०	३०	४५	

राहु की दशा में राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ध्रु.	ग्रह
४	४	५	४	१	५	१	२	१	०	मासादि
२५	९	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	८	
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	६	

राहु की दशा बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ध्रु.	ग्रह
३	४	४	१	४	१	[illegible]	१	४	०	मासादि
२५	१६	२	२०	२४	१२	१२	२०	९	७	
१२	४८	२४	२४	०	१३	०	२४	३६	१२	

राहु की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ध्रु.	ग्रह
५	४	१	५	१	२	१	५	४	०	मासादि
१५	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	८	
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	५४	३६	[illegible]	

राहु की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	भु.	ग्रह
४	१	५	१	२	१	४	४	४	०	मासादि
२१	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	७	
३	३३	०	५४	३०	३१	४२	२४	२१	३९	

राहु की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु	भु.	ग्रह
०	२	०	१	०	१	१	१	१	०	मासादि
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	३	
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	९	

राहु की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ	श.	बु.	के.	भु.	ग्रह
६	१	३	२	५	४	५	५	२	४	मासादि
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	९	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

राहु की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	भु.	ग्रह
०	०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासादि
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	२	
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	४२	

राहु की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	भु.	ग्रह
१	१	२	२	२	२	१	३	०	०	मासादि
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	४	
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	३०	

राहु की दशा मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु.	ग्रह
०	१	१	१	१	०	२	०	१	०	मासादि
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	३	
३	४२	२४	५१	३३	३	३०	५४	३०	९	

अथ बृहस्पति की दशा और बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	ध्रु	ग्रह
२	४	३	१	४	१	२	१	३	०	मासादि
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	६	
२४	३६	४२	४८	०	२४	०	४८	१२	२४	

बृहस्पति की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ध्रु	ग्रह
४	४	१	५	१	२	१	४	४	०	मासादि
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	७	
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	१६	३६	

बृहस्पति की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	ध्रु.	ग्रह
३	१	४	१	२	१	४	३	४	०	मासादि
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	६	
३६	२६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	४८	

बृहस्पति की दशा में केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ध्रु.	ग्रह
०	१	०	०	०	१	१	१	१	०	मासादि
१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	२	
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	४८	

बृहस्पति की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ध्रु.	ग्रह
५	१	२	१	४	४	५	४	१	०	मासादि
१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६	८	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

बृहस्पति की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासादि
१४	२४	१६	१२	८	१५	१०	१६	१८	२	
३६	०	४८	१२	२४	३६	४८	३६	०	२४	

बृहस्पति की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	भु.	ग्रह
१	०	२	२	२	२	०	२	२	०	मासादि
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	४	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

बृहस्पति की दशा मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु.	ग्रह
०	१	१	१	१	१	१	०	०	०	मासादि
१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	२	
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	४८	

बृहस्पति की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के	शु.	सू.	चं.	मं.	भु.	ग्रह
४	३	४	४	१	४	१	२	१	०	मासादि
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	७	
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	१२	

अथ शनि की दशा और शनि की ही अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	भु.	ग्रह
५	५	२	६	१	३	२	५	४	०	मासादि
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	९	
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	१	
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	

शनि की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	भु.	ग्रह
४	१	५	१	२	१	४	४	५	०	मासादि
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	८	
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	५२	२५	४	
[illegible]	[illegible]	०	०	०	३०	०	०	३०	[illegible]	

शनि की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	भु.	ग्रह
०	०	०	१	०	१	१	२	१	०	मासादि
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	३	
१६	३०	-५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	१९	
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	

शनि की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	भु.	ग्रह
६	१	३	२	५	५	६	५	२	०	मासादि
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	९	
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	३०	

शनि की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु	के.	शु.	भु.	ग्रह
०	०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासादि
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	२	
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	५१	

शनि की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	भु.	ग्रह
१	१	२	२	३	२	१	३	०	०	मासादि
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	४	
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	४५	

शनि की दशा मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु.	ग्रह
०	१	१	२	१	०	२	०	१	०	मासादि
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	३	
१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५	१९	
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	

शनि की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ध्रु.	ग्रह
५	४	५	४	१	५	१	५	१	०	मासादि
	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	८	
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	३३	

शनि की दशा और बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ध्रु	ग्रह
४	४	४	१	५	१	२	१	४	०	मासादि
	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१८	७	
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	

अथ बुध की दशा और बुध ही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	ध्रु.	ग्रह
४	१	४	१	२	१	४	३	४	०	मासादि
२	२०	२४	१३	१२	२०	१०	२५	१७	७	
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	१३	
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	

बुध की दशा और केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ध्रु.	ग्रह
०	१	०	०	०	१	१	१	१	०	मासादि
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	२	
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	५८	
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	

बुध की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	। .	रा.	बृ.	बा.	बु.	के.	ध्रु.	ग्रह
५	१	२	१	५	४	५	४	१	०	मासादि
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९	८	
०	०	०	[illegible]	०	०	०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	

बुध की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासादि
१५	२५	१७	१५	१०	१८	४३	१७	२१	२	
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	३३	

बुध की दशा और चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ध्रु.	ग्रह
.१	०	२	२	२	२	०	२	०	०	मासादि
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	५	२५	४	
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	१५	

बुध की दशा मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ध्रु.	ग्रह
०	१	१	१	१	०	१	०	०	०	मासादि
२०	२३	१७	१६	२०	२०	२९	१७	२९	२	
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	५८	
५२	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	

बुध की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ध्रु.	ग्रह
४	४	४	४	१	५	१	२	१	०	मासादि
१७	२	२५	१०	२१	३	१५	१६	२३	७	
४१	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	३१	

बुध की दशा बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ध्रु.	ग्रह
३	४	३	१	४	१	२	१	४	०	मासादि
१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	६	
४८	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	

बुध की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ध्रु.	ग्रह
५	४	१	५	१	२	१	४	४	०	मासादि
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	८	
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	४	
३०	३०	५७	०	०	०	३०	०	०	३०	

अथ केतु की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	२	
३४	३०	२१	१५	३	३	३६	१६	४९	५८	
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	

केतु की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ध्रु.	ग्रह
२	०	१	०	२	१	२	१	०	०	मासादि
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	३	
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	३०	

केतु की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	१	
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	००	३	

केतु की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ध्रु.	ग्रह
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	मासादि
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१	
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	४५	

केतु की दशा मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासादि
८	२२	१९	१३	२०	८	२४	७	१२	१	
३४	३	२६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	१३	
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	३०	३०	

केतु की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	ध्रु.	ग्रह
१	१	१	१	०	२	०	१	०	०	मासादि
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	३	
२४	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	९	

केतु की दशा गुरु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ध्रु.	ग्रह
१	१	१	०	१	०	०	०	१	०	मासादि
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	२	
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	

केतु की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ	ध्रु.	ग्रह
२	१	०	२	०	१	०	१	१	०	मासादि
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२२	३	
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१९	
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	

केतु की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	ध्रु.	ग्रह
१	०	१	०	०	०	१	१	१	०	मासादि
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२	
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	५८	
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	

अथ शुक्र की दशा शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	भु.	ग्रह
६	२	३	२	६	५	६	५	२	०	मासादि
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	१०	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

शुक्र की दशा सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	भु.	ग्रह
०	१	०	१	१	१	१	०	२	०	मासादि
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	३	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

शुक्र की दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

चं.	मं	रा.	बृ.	श.	बु	के.	शु.	सू.	भु.	ग्रह
१	१	३	२	३	२	१	३	१	०	मासादि
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	५	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

शुक्र की दशा मङ्गल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भु.	ग्रह
०	२	१	२	१	०	२	०	१	०	मासादि
२४	३	२६	६	२९	२४	१०	२१	५	३	
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	

शुक्र की दशा राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	भु.	ग्रह
५	४	५	५	२	६	१	३	२	०	मासादि
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	९	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

शुक्र की दशा बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	भु.	ग्रह
४	५	४	१	५	१	२	१	४	०	मासादि
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	८	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	

शुक्र की दशा शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ध्रु.	ग्रह
६	५	२	६	१	३	२	५	५	०	मासादि
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	९	
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	

शुक्र की दशा बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

बु.	के	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	ध्रु.	ग्रह
४	१	५	१	२	१	५	४	५	०	मासादि
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	८	
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	

शुक्र की दशा केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ध्रु.	ग्रह
०	०	०	१	०	२	१	२	१	०	मासादि
२४	१०	२१	५	२४	३	२५	६	२९	३	
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	

अथ शुभाशुभसंज्ञाध्यायः।

बुधैर्भावादयः सर्वे ज्ञेयाः सामान्य शास्त्रतः।
एतच्छास्त्रानुसारेण संज्ञां ब्रूमो विशेषतः॥ ४॥

(अन्वयः) बुधैः तन्वादयो द्वादशभावाः सामान्यशास्त्रतः ज्ञेयाः। एतत् शास्त्रानुसारेण तु (वयम्) विशेषतः संज्ञा ब्रूमः॥ ४॥

अर्थः—पण्डितों को उचित है कि वे तनु, धन, सहज, सुख, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय और व्यय इन नामों को सामान्य शास्त्रों से जान लेवे। मैं विशेष नाम इस शास्त्र (ग्रन्थ) से कहूंगा। तात्पर्य यह है कि ग्रहों के स्वभाव और उनके फल तथा यवनों के ताजिक (जातक) ग्रन्थों को जानना। उसका प्रकार इस भाँति है कि ग्रहों के स्वभाव सब प्रकार के होते हैं। 'धीमः

स्वस्थः प्रमुदितः शान्तो दीनोऽतिदुःखितः । विकलश्च खलः कोपी नवधा खेचरो भवेत् ॥ १ दीप्त, २ स्वस्थ, ३ प्रमुदित, ४ शान्त, ५ दीन, ६ अतिदुःखित, ७ विकल, ८ खल और ९ कोपी । 'उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्वपतिमित्रभे ॥ मुदितो मित्रभे शान्तः समभे दीन उच्यते ॥ १ ॥ शत्रुभे दुःखितोऽतीव विकलः पापसंयुतः । खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः ॥ २ ॥ पृथक् पृथक् फलं तेषां दशापाके विशेषतः । उत्तमाद्यनुसारेण फलं पाके वदन्ति हि ॥ ३ ॥" उच्चराशि का ग्रह दीप्त होता है । स्वस्थान का स्वामी ग्रह स्वस्थ होता है । मित्र स्थान का ग्रह मुदित होता है । और उसी स्थान का ग्रह शान्त होता है । तुल्य-स्थान का ग्रह दीप्त होता है । शत्रुस्थान का ग्रह अतिदुःखित होता है । पाप ग्रह के साथ का ग्रह विकल होता है । खलस्थान का ग्रह खल होता है । सूर्य के साथ रहने वाला ग्रह कोपी होता है । इसका फल आगे स्पष्ट होवेगा ॥ ४ ॥

पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजाः पुनः ।
विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् ॥ ५ ॥

(अन्वय) सर्वे (रव्यादयो ग्रहाः स्वाधिष्ठितस्थानात्) सप्तम (स्थानं तत्र स्थितं ग्रहं च) पश्यन्ति । पुनः शनि-जीव-कुजाः तु विशेषतः यथासंख्यं त्रिदश-त्रिकोण-चतुरष्टमान् अपि पश्यन्ति ॥ ५ ॥

अर्थः—सूर्य आदि सब ग्रह अपने रहने के स्थान से सप्तम स्थान और उसमें रहने वाले ग्रह को पूर्णदृष्टि से देखते हैं । परन्तु शनि, बृहस्पति और मङ्गल तो सप्तम तृतीय दशम स्थान, त्रिकोण १।५।९ और चतुर्थ तथा अष्टम स्थान को भी पूर्णदृष्टि से देखते हैं । अर्थात् शनि सप्तम, तृतीय और दशम स्थान को, बृहस्पति सप्तम, पञ्चम और नवम स्थान को, और मङ्गल सप्तम चतुर्थ और अष्टम स्थान को पूर्णदृष्टि से देखते हैं । अन्य जातक ग्रन्थ में त्रिदश (३।१०) को पाददृष्टि, त्रिकोण (५।९) को अर्धदृष्टि, चतुरस्र (४।८) को त्रिपाद दृष्टि समस्त ग्रहों की मानी गई है । इस ग्रन्थ में पूर्णदृष्टि ही मानी गई है । इतना अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा इसमें विशेषता है और त्रिकोणपद से लग्न का भी संग्रह किया है ॥ ५ ॥

सर्वे त्रिकोणनेतारो ग्रहाः शुभफलप्रदाः ।
पतयस्त्रिषडायानां यदि पापफलप्रदाः ॥ ६ ॥

(अन्वयः) त्रिकोणनेतारः सर्वे ग्रहाः शुभफलप्रदाः भवन्ति (यदि ते पापग्रहाः)। (अथ शुभग्रहाः अपि) त्रिषडायानां यदि पतयः तदा पापफलप्रदाः भवन्ति ॥ ६ ॥

अर्थः—पापग्रह भी यदि लग्न, पञ्चम और नवम स्थान में रहते हैं, तो शुभफल देनेवाले होते हैं और यदि शुभग्रह भी तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थान में होवें तो अशुभ फल देनेवाले होते हैं। तात्पर्य यह है कि सब ग्रह स्वभाव से ही शुभफल देनेवाले होते हैं। परन्तु यदि पापग्रह भी लग्न, पञ्चम और नवम स्थान में रहते हैं तो वे भी शुभफल देते हैं, शुभग्रह तो शुभफल देते ही हैं। शुभग्रह भी यदि तृतीय षष्ठ एकादश स्थान में होवें, तो वे भी अशुभ फल देते हैं, पापग्रह तो अशुभ फल देते ही हैं। तत्कालिक और स्वाभाविक भेद से ग्रहों के शुभशुभत्व दो प्रकार से माने जाते हैं। इस ग्रन्थ में तात्कालीक शुभाशुभत्व लिया गया है। स्वाभाविक शुभाशुभत्व के लिये अन्य ग्रन्थों में यह नियम है कि "सूर्यसौरिकुजाः पापा गुरुशुक्रौ शुभौ स्मृतौ ॥ शेन्दू समौ, तमःखेटौ साहचर्यात् फलप्रदौ" इति ॥ ६ ॥

न दिशन्ति शुभं नृणां सौम्याः केन्द्राधिपा यदि ।
क्रूराश्चेदशुभं ह्येते प्रबलाश्चोत्तरोत्तरम् ॥ ७ ॥

(अन्वयः) सौम्याः (ग्रहाः पूर्णचन्द्रबुधगुरुशुक्राः) यदि केन्द्राधिपाः तदा नृणां शुभं (शुभफलं) न दिशन्ति। चेत क्रूराः (सूर्य भौम शनयः) केन्द्राधिपाः स्युः तदा अशुभं न दिशन्ति। एते (त्रिषडायपतयः केन्द्रपतयः च) उत्तरोत्तरं प्रबलाः भवन्ति ॥ ७ ॥

अर्थः—सौम्यग्रह अर्थात् पूर्णचन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र यदि प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थान के स्वामी होवें तो वे मनुष्यों को शुभफल नहीं देते। परन्तु यदि क्रूर अर्थात् सूर्य, मंगल और शनि केन्द्र के स्वामी हों तो अशुभ फल नहीं देते। इन लग्न, पञ्चम और नवम स्थान के,

तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थान के और प्रथम, चतुर्थ सप्तम और दशम स्थान के स्वामियों में पूर्व २ स्थान के स्वामियों से उत्तर २ के स्वामी ग्रह प्रबल होते हैं। अर्थात् लग्न के स्वामी से पञ्चम का स्वामी प्रबल होता है। पञ्चम के स्वामी से नवम का स्वामी प्रबल होता है। तृतीय के स्वामी से षष्ठ का स्वामी प्रबल होता है। षष्ठ के स्वामी से एकादश का स्वामी प्रबल होता है। केन्द्र के स्वामियों मे भी इसी प्रकार-प्रथम के स्वामी से चतुर्थ का, चतुर्थ के स्वामी से सप्तम का और सप्तम के स्वामी से दशम का स्वामी प्रबल होता है। इससे जो ग्रह प्रबल होता है उसीके अनुसार शुभ और अशुभ फल होता * है ॥ ७ ॥

लग्नाद्व्ययद्वितीयेशौ परेषां साहचर्यतः।
स्थानान्तरानुगुण्येन भवतः फलदायकौ ॥ ८ ॥

(अन्वयः) व्यय-द्वितीयेशौ परेषां ग्रहाणां साहचर्यतः स्थानान्तरानुगुण्येन "शुभाशुभ" फलदायकौ भवतः ॥ ८ ॥

अर्थः—जन्म लग्न से द्वितीय और द्वादश स्थान के स्वामी दूसरे ग्रहों के सम्बन्ध में उनके स्थान के अनुसार शुभ और अशुभ फल देते हैं। अर्थात् द्वितीयेश और द्वादशेश शुभ और अशुभ ग्रह के सम्बन्ध से और मित्र स्थान के होने से मित्रद्वारा और शत्रुस्थान के होने से शत्रुद्वारा शुभ और अशुभ फल देते हैं। इसी भांति दीप्त आदि पूर्वोक्त ग्रहों का शुभाशुभ फल होता है। दीप्त

---

* राशियों के स्वामी के विषय में लिखा है कि—"मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाधिपः। बुधः कन्यामिथुनयोः कर्काधिपतिचन्द्रमा ॥ १ ॥ गुरुर्मीनधनुःस्वामी शनिर्मकरकुम्भयोः। सिंहस्याधिपति सूर्यः कथितो गणकोत्तमैः ॥ २ ॥" अर्थ—मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी मङ्गल है। वृष और तुला राशि का स्वामी शुक्र है। कन्या और मिथुन का स्वामी बुध है। कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है। धन और मीन राशि का स्वामी बृहस्पति है। मकर और कुम्भ राशि का स्वामी शनि है। सिंह राशि का स्वामी सूर्य है। इस प्रकार गणकश्रेष्ठों ने राशियों के स्वामी कहे हैं ॥ १—२ ॥

आदि ग्रहों का फल इस भांति से है। प्रदीप्तग्रह की दशा में राज्यलाभ होता है, उत्साह बढ़ता है, शूरता बढ़ती है, धन मिलता है, वाहन की प्राप्ती होती है, स्त्री और पुत्र का लाभ होता है, शुभ होता है, भाई बन्धुओं में सत्कार होता है, राजा के यहां सत्कार होता है और विद्या प्राप्त होती है। स्वस्थग्रह की दशा में शरीर स्वस्थ रहता है, राजा से मिले हुए धन आदि का सुख होता है, विद्या, यश, प्रीति और दूसरे देश से महिमा प्राप्त होती है, स्त्री धन पृथिवी और पुत्र का सुख होता है। प्रमुदित ग्रह की दशा में वस्त्र, पृथिवी, सुगन्ध पुत्र, धन, धीरता, पुराण और धर्मशास्त्र का श्रवण, घोड़ा, रथ, हाथी, रंग-बिरंग के कपड़े और आभूषण का सुख होता है। शान्त ग्रह की दशा में सुख और धैर्य होता है, भूमि, पुत्र, वाहन, विद्या, विनोद, धर्मशास्त्र, बहुत धन और राजा की ओर से पूजा आदि का सुख होता है। दीप्त ग्रह की दशा में अपना स्थान छूट जाता है, बन्धुओं से विरोध होता है, वह नीच जीवन से जीवन काटता है, अपने कुटुम्ब से अलग हो जाता है और रोगों से दुःख पाता है। अतिदुःखित ग्रह की दशा में सदा नाना प्रकार का दुःख पाता है, बन्धुओं से वियोग होता है और चोर, अग्नि तथा राजा की ओर से भयभीत रहता है। विकलग्रह की दशा में विकल रहता है, मन में पीड़ा रहती है, मित्र आदि की मृत्यु होती है, विशेष करके स्त्री, पुत्र और वाहन का नाश होता है और चोर की पीड़ा होती है। खलग्रह की दशा में लोगों से वैर होता है, अपने कुटुम्ब से और पिता से वियोग होता है, शत्रुओं से धन और भूमि का नाश होता है और अपने कुटुम्ब के लोग निन्दा करते हैं। कोपीग्रह की दशा में नाना प्रकार के पापकर्म बनते हैं, विद्या, धन, स्त्री और पुत्र का नाश होता है, पुत्र आदि कष्ट पाते हैं और नेत्र में रोग होता है ॥ ८ ॥

भाग्यव्ययाधिपत्येन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः।
स एव शुभसन्धान लग्नाधीशोऽपि चेत्स्वयम् ॥ ९ ॥

(अन्वयः) भाग्यव्ययाधिपत्येन रन्ध्रेशः (अष्टमेशः) शुभप्रदः न (भवति)। स एव (अष्टमेश एव) स्वयं लग्नाधीशः अपि चेत् तदा शुभसन्धानं भवति ॥ ९ ॥

अर्थः—अष्टम-स्थान का स्वामी यदि नवम-स्थान वा व्यय-स्थान का स्वामी होवे तो शुभफल देने वाला नहीं होता, परन्तु यदि अष्टम का स्वामी लग्नेश होवे तो अशुभ फल देता है। कोई आचार्य कहते हैं कि अष्टम-स्थान से जो अष्टम होवे उसका स्वामी भी रन्ध्रेश होता है। इस भांति तृतीयेश भी रन्ध्रेश होकर बारहवें स्थान का स्वामी होवेगा और तब वह भी अशुभफल कारक होवेगा। और अष्टमेश, द्वादशेश होकर अशुभफल देता है, वैसे ही तृतीयेश भी देवेगा। जैसे कर्कलग्न होवे तो बुध रन्ध्रेश होता है और मकरलग्न में हो तो बृहस्पति रन्ध्रेश होता है। यदि तृतीयेश रन्ध्रेश नहीं होता तो द्वादशेश भी नहीं होवेगा ॥ ९ ॥

केन्द्राधिपत्यदोषस्तु बलवान् गुरुशुक्रयोः।
मारकत्वेऽपि च तयोर्मारकस्थानसंस्थितिः ॥१०॥

(अन्वयः) केन्द्राधिपत्यदोषः तु गुरुशुक्रयोः एव बलवान् भवति च तयोः मारकस्थानसंस्थितिः अपि मारकत्वे भवति ॥ १० ॥

अर्थः—केन्द्राधिपति दोष, अर्थात् प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थान के स्वामीपन का दोष, गुरु और शुक्र के ही विषय में प्रबल होता है। और मारक-स्थान में अर्थात् द्वितीय और सप्तम स्थान में उन दोनों का रहना भी और मारकों से इन दोनों में बल मारकता बताता है ॥ १० ॥

बुधस्तदनु चन्द्रोऽपि भवेत्तदनु तद्विधः।
न रन्ध्रेशत्वदोषस्तु सूर्याचन्द्र मसोर्भवेत् ॥ ११ ॥

(अन्वयः) तद्विधः बुधः तदनु (शुक्रापेक्षया गुरोरपेक्षया च न्यूनमाकरत्वदोषवान्) तद्विधः चन्द्रः अपि तदनु (मारकः चन्द्रः अपि बुधापेक्षया न्यूनमारकत्वदोषवान्) अस्ति। सूर्याचन्द्रमसोस्तु रन्ध्रेशत्वदोषो न भवेत् ॥ ११ ॥

अर्थः—केन्द्र का स्वामी बुध बृहस्पती और शुक्र से कम दोष वाला होता है। और केन्द्र का स्वामी चन्द्रमा बुध से कम दुष्ट होता है अर्थात् बुध में मारक शक्ति बृहस्पति और शुक्र से कम है और चन्द्रमा में बुध से भी कम है।

परन्तु सूर्य और चन्द्रमा को अष्टमस्थान के स्वामीपन का दोष नहीं छूता है। अर्थात् ये दोनों मारक नहीं होते ॥ ११ ॥

कुजस्य कर्मनेतृत्वप्रयुक्ता शुभकारिता।
त्रिकोणस्यापि नेतृत्वे न कर्मेशत्वमात्रतः ॥१२॥

(अन्वयः) कुजस्य कर्मनेतृत्वप्रयुक्ता शुभ कारिता त्रिकोणस्य अपि नेतृत्वे (सति) भवति न कर्मेशत्वमात्रतः ॥ १२ ॥

अर्थः—मङ्गल तभी शुभ देने वाला होता है, जब वह पञ्चम और नवम स्थान का स्वामी होकर दशम स्थान का स्वामी होता है। केवल दशम स्थान का स्वामी होने से ही मङ्गल शुभफल का दाता नहीं होता है। यह योग उसी की ग्रहकुण्डली में पड़ता है जिसका जन्म कर्कलग्न में होता है। कारण यह है कि कर्कलग्न से वृश्चिक पञ्चम और मेष दशम पड़ता है, और मङ्गल उनका स्वामी है। पाराशरी में इसी प्रसङ्ग से ग्रहों का शुभ होना, अशुभ होना और योगकारक होना स्पष्ट रीति से लिखा गया है। यहाँ संक्षेप से कुछ लिख दिया जाता है। शनि, बुध और शुक्र पापग्रह हैं और बृहस्पति, सूर्य शुभग्रह हैं। परन्तु केवल योग से ही शनि और बृहस्पति शुभफल देने वाले नहीं होते। बृहस्पति का पापग्रह होना परतन्त्रता से है यह बाते निश्चित हैं। यदि शुक्र मारक होता है तो वह आप ही अशुभ कर्ता है, इन दोनों के संग से और २ ग्रह भी पापग्रह हो जाते हैं। यह फल मेष राशि में जिसका जन्म होता है उसका है। वृष राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये बृहस्पति और चन्द्रमा पापग्रह हैं। शनि और बुध शुभग्रह हैं। इसको राज्ययोग केवल शनि करते हैं। इसके लिये बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा पापग्रह और मारक होते हैं। मिथुन राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये मङ्गल, बृहस्पति और सूर्य पापग्रह हैं, और शुक्र शुभग्रह है। शनि के साथ से बृहस्पति पापग्रह होता है। पापग्रह होने पर भी यह चन्द्रमा मारक नहीं होता। ये सब फल सूर्य के हैं। कर्क राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये शुक्र और बुध पापग्रह हैं, मङ्गल और बृहस्पति शुभग्रह हैं। योगकारक ग्रह केवल मङ्गल हैं। शनि पूर्ण मारक है, और शेष कष्टकारक हैं। सिंह राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये बुध और शुक्र पापग्रह हैं, और मङ्गल शुभग्रह है।

परन्तु मङ्गल और शुक्र के संयोग से ही शुभफल नहीं होता। बुध आदि पापग्रह मारक होकर उसे नष्ट कर देते हैं। कन्याराशि में उत्पन्न पुरुष के लिये मङ्गल, बृहस्पति और चन्द्रमा पापग्रह हैं, और शुक्र शुभग्रह है, शुक्र और बुध ही राजयोगकारक ग्रह हैं, मृत्युकारक शुक्र है और शेष केवल कष्टकारक हैं। तुला राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये बृहस्पति सूर्य और मङ्गल पापग्रह हैं, और शनि वा बुध शुभग्रह हैं, चन्द्रमा और बुध राज्य करने वाले होते हैं, मङ्गल पूर्ण मारक हैं, वा पहिले मारक हैं। शुक्र मारक नहीं है। वृश्चिक राशि में उत्पन्न पुरुष के लिए बुध मङ्गल और शुक्र पापग्रह हैं और बृहस्पति पूर्ण मारक और बुध आदि कष्टकारक हैं। धन राशि में उत्पन्न पुरुष के लिए शुक्र ही पापग्रह है। बुध और सूर्य शुभ हैं। सूर्य और बुध योगकारक होते हैं। मृत्युकर्ता शनि है। शुक्र आदि पापग्रह कष्टकारक होते हैं। मकर राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये मङ्गल, बृहस्पति और चन्द्रमा पापग्रह हैं, और शुक्र और बुध शुभ हैं। साक्षात् मृत्युकर्ता शनि है, और मङ्गल आदि कष्टकारक हैं। एक शुक्र शुभफल करता है। कुम्भ राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये बृहस्पति, चन्द्रमा और मङ्गल पापग्रह हैं और शुक्र शुभ है। मङ्गल और शुक्र राजयोग करने वाले हैं। बृहस्पति पूर्ण मारक है, और मङ्गल आदि मारक हैं। मीन राशि में उत्पन्न पुरुष के लिये शनि, शुक्र, सूर्य और बुध पापग्रह हैं और मङ्गल और चन्द्रमा शुभ हैं, मङ्गल और बृहस्पति राजयोगकर्ता हैं, मङ्गल शनि और बृहस्पति पापग्रह तथा मारक हैं॥ १२॥

यद्यद्भावगतौ वापि यद्यद्भावेशसंयुतौ।
तत्तत्फलानि प्रबलौ प्रदिशेतां तमोग्रहौ॥ १३॥

(अन्वयः) तमोग्रहौ यत् यत् भावगतौ अपि यत् यत् भावेशसंयुतौ वा स्यातां तत् तत् फलानि प्रबलौ सन्तौ अपि प्रदिशेताम्॥१३॥

अर्थः—राहु और केतु जिस २ स्थान में रहें, वा जिस २ स्थान के स्वामी के साथ रहें तो प्रबल होने पर भी उन २ स्थानों के स्वामी ग्रहों का फल ही करते हैं। अर्थात् वे दोनों स्वतन्त्र शुभ वा अशुभ नहीं करते, किन्तु शुभ और अशुभग्रह के फल में सहायता करते हैं॥ १३॥

इति संस्कृतान्वय भाषानुवादसहिते उडुदायप्रदीपे संज्ञाध्यायः प्रथमः॥

अथ राजयोगाध्यायः ॥ २ ॥

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम् ।
इतरैरप्रसक्ताश्चेद्विशेषफलदायकाः ॥ १ ॥

(अन्वयः) चेत् इतरैः (त्रिषडाष्टमपतिभिः) अप्रसक्ताः केन्द्रत्रिकोणपतयः परस्परसम्बन्धेन विशेष फलदायकाः (भवन्ति) ॥ १ ॥

अर्थः—यदि तृतीय, षष्ठ, एकादश और अष्टम स्थान के स्वामियों के साथ सम्बन्ध रखते हुए प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव के स्वामी, पञ्चम और नवम भाव के स्वामी के साथ सम्बन्ध रखते होवें तो विशेष फल देने वाले होते हैं। केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों का सम्बन्ध चार प्रकार का होता है। प्रथम-एक का दूसरे के स्थान में रहना, द्वितीय-एक पूर्णदृष्टि दूसरे पर होना, तृतीय-दोनों में एक की पूर्णदृष्टि का होना परन्तु दूसरे की दृष्टि का न होना और चतुर्थ एक ही स्थान में दोनों का रहना। जैसे १ मेष वा वृश्चिक राशि में सूर्य होवे, और सिंह में मङ्गल हो तो दोनों का सम्बन्ध होता है। २ मेष में मङ्गल रहे और तुला में सूर्य हो तो दोनों की दोनों पर पूर्णदृष्टि होती है। ३ सिंहराशि का मङ्गल मीन राशि के सूर्य को देखता है, परन्तु सूर्य मङ्गल को नहीं देखता। ४ सूर्य और मङ्गल और दोनों का वृष राशि में होना। इन चारों सम्बन्धों में पहिला २ सम्बन्ध अगले २ सम्बन्ध से बलवान् होता है। इस भाँति और २ राशिस्वामियों का सम्बन्ध समझ लेना ॥ १ ॥

केन्द्रत्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयम् ।
सम्बन्धमात्राद्बलिनौ भवेतां योगकारकौ ॥ २ ॥

(अन्वयः) केन्द्रत्रिकोणनेतारौ स्वयं दोषयुक्तौ अपि सम्बन्धमात्रात् बलिनौ सन्तौ योगकारकौ भवेताम् ॥ २ ॥

अर्थः—चतुर्थ, सप्तम, दशम, पञ्चम और नवम स्थानों के स्वामी यदि आप दोष वाले होवें तो पहले श्लोक में कहे हुए चारो सम्बन्ध से ही प्रबल होकर शुभफलदायक योग करने वाले हो जाते हैं। पाराशरी में इस बात का

संग्रह इस भांति किया है कि पञ्चम और नवम स्थान विशेष धनस्थान कहा जाता है और चतुर्थ तथा दशम स्थान विशेष सुखस्थान कहा जाता है चन्द्रमा और सूर्य के सिवाय जितने मारकेश हैं सब मारक हैं। षष्ठ, अष्टम और द्वादशेश राहु, केतु, द्वितीय के स्वामी, द्रेष्काण के स्वामी, विनाशक स्थान के स्वामी, विपत् तारा, प्रत्यरि के स्वामी और चन्द्रमा के गुरु का स्वामी ये सब मारक हैं। मारक अपनी दशा में मृत्यु करता है, और अन्य की दशा में मृत्यु योग करता है ॥ २ ॥

निवसेत्तां व्यत्ययेन तावुभौ धर्मकर्मणोः ।
एकत्रान्यतरो वापि वसेच्चेद्योगकारकौ ॥ ३ ॥

(अन्वयः) धर्मकर्मणोः (नेतारौ) तौ उभौ व्यत्ययेन निवसेताम् , (उभयोः) अन्यतरो वा एकत्र वसेत् चेत् (तदा) अपि योगकारकौ (भवतः) ॥ ३ ॥

अर्थः—यदि केन्द्र और त्रिकोण के स्वामी अपना २ स्थान बदल कर रहें, वा दोनों में से कोई एक किसी स्थान में रहें तो भी राजयोग करते हैं। तात्पर्य यह कि योग चार प्रकार से होता है। कर्मस्थान में धर्मेश रहे और धर्मस्थान में कर्मेश रहें यह प्रथम योग है। धर्मस्थान में धर्मेश और कर्मेश रहें यह द्वितीय योग है। कर्मभाव में कर्मेश और धर्मेश रहें यह तृतीय योग है। दोनों में से एक ही एक भाव में रहे यह चतुर्थ योग है। जहां इनमें से कोई योग का सम्भव होगा वहां राजयोग होता है ॥ ३ ॥

त्रिकोणाधिपयोर्मध्ये सम्बन्धो येन केनचित् ।
केन्द्रनाथस्य बलिनो भवेद्यदि सुयोगकृत् ॥ ४ ॥

(अन्वयः) त्रिकोणाधिपतयोः मध्ये येन केनचित् यदि बलिनः केन्द्रनाथस्य सम्बन्धः भवेत् (तदा सः) सुयोगकृत् भवति ॥ ४ ॥

अर्थः—पञ्चम वा नवम स्थान के स्वामियों में से जिस किसी के साथ दशम स्थान के स्वामी का यदि सम्बन्ध होवे तो वह सुन्दर राजयोग करता है ॥ ४ ॥

दशास्वपि भवेद्योगः प्रायशो योगकारिणोः ।
दशाद्वयीमध्यगतस्तद्युक्शुभकारिणाम् ॥ ५ ॥

(अन्वयः) योगकारिणोः या दशाद्वयीमध्यगतः तद्युक् शुभकारिणां दशासु अपि प्रायशः योगः भवेत् ॥ ५ ॥

अर्थः—राजयोग करने वाले केन्द्र और त्रिकोणेश की दशा से सम्बन्ध न करने वाले शुभग्रहों की दशा में भी बहुधा राजयोग होता है । तात्पर्य यह कि नवमेश दशमेश की दशा के मध्य में यदि किसी शुभग्रह की दशा आवे तो वह दशा अवश्य राजयोग कारक होती है । इस योग के लिये इस बात की आवश्यकता नहीं है कि नवमेश और दशमेश के साथ अन्तर्दशा वाले शुभग्रहों का सम्बन्ध होवे । यदि सम्बन्ध होवे तो पूर्ण योग हो जाता है ॥ ५ ॥

योगकारकसम्बन्धात् पापिनोऽपि ग्रहाः स्वतः ।
तत्तद्भुक्त्यनुसारेण दिशेयुर्योगजं फलम् ॥ ६ ॥

(अन्वयः) स्वतः पापिनः अपि ग्रहाः योगकारकसम्बन्धात् तत् तत् भुक्त्यनुसारेण योगजं फलं दिशेयुः ॥ ६ ॥

अर्थः—स्वयं अशुभ फल देने वाले भी ग्रह राजयोग करने वाले ग्रह के सम्बन्ध से उक्त ग्रह की अन्तर्दशा में राजयोग के फल को देते हैं । अर्थात् योगकारक ग्रह की जब अन्तर्दशा आती है, तब पापग्रह भी उसके साथ शुभ फल देते हैं ॥ ६ ॥

केन्द्रत्रिकोणाधिपयोरेकत्वे योगकारकौ ।
अन्यत्रिकोणपतिना सम्बन्धो यदि किं परम् ॥७॥

(अन्वयः) केन्द्रत्रिकोणाधिपतयोः एकत्वे (सति उभौ) योगकारकौ (भवतः) यदि (पुनः) अन्यत्रिकोणपतिना (सह) सम्बन्धः (तदा ततः) परं किं श्रेष्ठम् ॥ ७ ॥

अर्थः—एक केन्द्र-स्वामी का यदि एक त्रिकोण स्वामी के साथ सम्बन्ध हो जावे, तो वे दोनों राजयोग करनेवाले होते हैं । परन्तु यदि और त्रिकोण—

स्वामियों के साथ सम्बन्ध होवे तो फिर इससे उत्तम और क्या होवेगा ? अर्थात् फिर तो उत्तम-उत्तम राजयोग का अवसर आ जाता है ॥ ७ ॥

यदि केन्द्रे त्रिकोणे वा निवसेतां तमोग्रहौ ।
नाथेनान्यतरेणापि सम्बन्धाद्योगकारकौ ॥८॥

(अन्वयः) तमोग्रहौ यदि केन्द्रे वा त्रिकोणे निवसेतां (तत्र) अन्तरेण अपि नाथेन सम्बन्धात् योगकारकौ (भवतः) ॥ ८ ॥

अर्थ—जब राहु और केतु केन्द्र में वा त्रिकोण में रहें तब केन्द्र के वा त्रिकोण के स्वामी के साथ सम्बन्ध होने से दोनों राजयोग करनेवाले होते हैं। इन दोनों का सम्बन्ध इस प्रकार होता है कि जब दोनों केन्द्र में रहते हैं, तब त्रिकोणेश के साथ सम्बन्ध होता है, और जब त्रिकोण में रहते हैं, तब केन्द्रस्वामी के साथ सम्बन्ध होता है। इन सब राजयोगों के विषय में पाराशरी में लिखा है, कि—यदि नवमेश मन्त्रेश होवे, वा मन्त्रेश नवमेश होवे, वा दोनों स्थानों के स्वामियों की परस्पर पूर्णदृष्टि होवे तो राजयोग होता है। जिस किसी स्थान में दोनों का संयोग होवे वा दोनों बराबर सप्तम भाव में होवें, तो राजकुल में उत्पन्न होने वाला बालक राजा होता है। वाहनेश मान स्थान में होवे वा मानेश वाहन स्थान में होवे, और दोनों पर राज्येश और धर्मेश की पूर्णदृष्टि होवे तो राजयोग होता है। पञ्चमेश दशमेश चतुर्थेश और लग्नेश यदि नवमेश के साथ होवे, तो ऐसे योग वाला वह राजा होता है जिसका प्रभाव दशो दिशाओं में फैला रहता है, और जिसके यहाँ मतवाले हाथियों का समूह जमा रहता है। चतुर्थेश और कर्मेश यदि पञ्चमेश के, वा धर्मेश के साथ होवे तो इस योग में उत्पन्न बालक राजा होता है। पञ्चमेश नवमेश के साथ होवे वा २,४, ११, में लग्नेश के साथ होवे तो राजयोग होता है। धर्मस्थान में गुरु का स्थान होवे, अपने गृह में शुक्र होवे, और पञ्चमेश का साथ होवे तो राजयोग होता है। शुक्र के पञ्चम क्षेत्र में यदि शुक्र होवे, और लाभस्थान में शनि होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष बड़ा धनी होता है। बुध के प्रथम स्थान में यदि बुध होवे और लाभस्थान में चन्द्रमा होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष बड़ा धनी होता है। शनि के पञ्चम क्षेत्र में यदि सूर्य होवे, और लाभस्थान

में बुध होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष बड़ा धनी होता है। शनि के पञ्चम क्षेत्र में यदि शनि होवे, और लाभस्थान में मंगल होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष बड़ा धनी होता है। बृहस्पति के पञ्चम क्षेत्र में यदि बृहस्पति होवे और लाभस्थान में चन्द्रमा और मंगल होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष बड़ा धनी होता है। सूर्य के क्षेत्र में यदि लग्न में सूर्य होवे और मङ्गल तथा बृहस्पति की उस पर पूर्णदृष्टि होवे, वा सूर्य मङ्गल और बृहस्पति के साथ होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी होता है। चन्द्रमा के क्षेत्र में यदि लग्न में चन्द्रमा होवे, और उसके साथ बृहस्पति और मङ्गल होवे, वा उनकी पूर्णदृष्टि होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी होता है। मंगल के क्षेत्र में मंगल होवे, और उसके साथ बुध, शुक्र और शनि होवे, वा उनकी पूर्णदृष्टि होवे, तो इस योगमें उत्पन्न पुरुष धनवान् होता है। बृहस्पति के क्षेत्र में लग्न में बृहस्पति होवे, और उसके साथ बुध और मङ्गल होवे वा उनकी पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी होता है। बुध के क्षेत्र में लग्न में बुध होवे और उसके साथ शनि और शुक्र होवे, वा उनकी पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी होता है। शुक्र के क्षेत्र में लग्न में यदि शुक्र होवे, और उसके साथ शनि और बुध होवे वा उनकी पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी होता है।

लग्नेश यदि द्वादशस्थान में होवे द्वादशेश लग्न में होवे, और उसके साथ अष्टमेश होवे, वा उसकी पूर्णदृष्टि होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। लग्नेश पर अष्टमेश की पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। लग्न और चन्द्रमा केतु के साथ होवे, वा लग्नेश अस्त हो गया होवे, और उस पर अष्टमेश की पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। और लग्नेश षष्ठ वा अष्टम स्थान में होवे, और उसके साथ पापग्रह होवें और उस पर अष्टमेश की पूर्णदृष्टि होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष चाहे वह राजकुल का ही क्यों न होवे तब भी दरिद्र होता है। लग्नेश यदि षष्ठेश अष्टमेश और द्वादशेश के साथ होवे, और उस पर पापग्रहों की पूर्णदृष्टि होवे, और शुभग्रहों की दृष्टि न होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। लग्नेश और षष्ठेश यदि षष्ठ और लग्नस्थान में होवें और उन दोनों पर

मारकेश की पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। लग्न में यदि पापग्रह होवे, और उसके साथ राज्येश वा धर्मेश न होवे और मारकेश का साथ होवे, वा उसकी पूर्णदृष्टि होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। जिस भाव का स्वामी अष्टम, षष्ठ और द्वादश स्थान में होवे, तथा उस पर पापग्रहों की वा शनि की दृष्टि होवे, तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दुखी और दरिद्र होता है। चन्द्रमा का साथी नवांशेश यदि मारकेश का साथी होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है। लग्नेश और नवांशेश यदि द्वादश षष्ठ और अष्टम स्थान में होवे और उस पर मारकेश की दृष्टि होवें, वा मारकेश का साथ होवे तो इस योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र होता है ॥ ८ ॥

धर्मकर्माधिनेतारौ रन्ध्र लाभाधिपौ यदि ।
तयोः सम्बन्धमात्रेण न योगं लभते नरः ॥ ९ ॥

(अन्वयः) धर्मकर्माधिनेतारौ यदि रन्ध्रलाभाधिपौ (भवेताम् तदा) तयोः सम्बन्धमात्रेण नरः योगं न लभते ॥ ९ ॥

अर्थः—यदि नवम-स्थान का स्वामी अष्टम-स्थान का स्वामी होवे, और दशम-स्थान का स्वामी एकादश का स्वामी होवे, वा नवम-स्थान का स्वामी अष्टम स्थान का स्वामी होवे और दशम-स्थान का स्वामी एकादश स्थान का स्वामी होवे तो राजयोग नहीं होता ॥ ९ ॥

इति भाषानुवादसहिते उडुदायप्रदीपे द्वितीयो राजयोगाध्यायः समाप्तः ॥

अथ आयुर्विचाराध्यायः ।

अष्टमं ह्यायुषः स्थानमष्टमादष्टमं च यत् ।
तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥ १ ॥

(अन्वयः) (जन्मलग्नात्) अष्टमस्थानं आयुषः स्थानं (उच्यते) अष्टमात् च यत् अष्टमं (तदपि आयुःस्थानं उच्यते) तयोः अपि व्यय-स्थानं मारकस्थानं उच्यते ॥ १ ॥

अर्थः—जन्मलग्न से अष्टम-स्थान, वा अष्टम-स्थान से अष्टम अर्थात् लग्न से तृतीय स्थान आयुष्य का स्थान कहाता है और इन दोनों का व्ययस्थान अर्थात् लग्न से सप्तम और द्वितीय स्थान मारक है ॥ १ ॥

तत्राप्याद्यव्ययस्थानात् द्वितीयं बलवत्तरम् ।
तदीशितुस्तत्र गताः पापिनस्तेन संयुताः ॥ २ ॥
तेषां दशाविपाकेषु सम्भवे निधनं नृणाम् ।
तेषामसम्भवे साक्षाद्व्ययाधीशदशास्वपि ॥ ३ ॥

(अन्वयः) तत्र अपि आद्यव्यस्थानात् द्वितीयं बलवत्तरम् (भवति) तत् ईशितुः दशाविपाकेषु सम्भवे (सति) नृणां निधनं भवेत् (अथवा) तत्र गताः तेन संयुताः (ये) पापिनः तेषां दशाविपाकेषु सम्भवे (सति भवति) तेषां असम्भवे साक्षात् व्ययाधीशदशासु अपि निधनं (भवेत्) ॥२-३ ॥

अर्थः—इन दोनों मारकों में अष्टम का मारक बलवान् है, और तृतीय स्थान का उससे बलवान् है । इससे द्वितीयेश की अन्तर्दशा में मनुष्यों का मरण होता है, वा द्वितीय-स्थान में जो जो पापग्रह रहते हैं (षष्ठेश, तृतीयेश और द्वादशेश) उनकी अन्तर्दशा में मनुष्यों की मृत्यु होती है । यदि इन मारकेशों की दशा वा अन्तर्दशा में मृत्यु न होवे तो व्ययेश के जन्मलग्न से द्वादश स्थान के स्वामी की, वा उसके साथी पापग्रहों की दशा, वा अन्तर्दशा में मृत्यु होती है । मनुष्य की आयुष्य तीन श्रेणी में बटी है । प्रथम स्वल्प, द्वितीय मध्यम, और तृतीय दीर्घ, बत्तीस वर्ष के पहिले जो आयुष्य समाप्त होती है उसे अल्पायु कहते हैं । जिसकी ३२ के ऊपर ७० में आयुष्य समाप्त होती है उसे मध्यम कहते हैं । और सत्तर के ऊपर जो आयुष्य समाप्त होती है, उसे दीर्घ कहते हैं । १०० सौ से अधिक आयु होने से उत्तमायु कहा गया है । जिसका लग्नेश सूर्य होता है वह अल्पायु है । जिसके लग्नेश शुक्र, शनि और चन्द्रमा हैं वह मध्यायु है । जिसके लग्नेश बुध, बृहस्पति और मङ्गल है वह दीर्घायु है । जिस पुरुष की अल्पायु होवे, वह विपत्तारा में मृत्यु पाता है । जिसकी मध्यमायु है, वह प्रत्यक्तारा में, और जिसकी उत्तमायु है वह मारक

नक्षत्र में मृत्यु पाता है। ऊपर कही हुई तीनों प्रकार की आयु, अल्प, मध्यम और उत्तम भेद से तीन प्रकार की होती हैं। अल्पायु मध्याल्पायु, उत्तमाल्पायु, अल्पमध्यायु, मध्यमध्यायु, उत्तममध्यायु, अल्पउत्तमायु, मध्यउत्तमायु, उत्तमउत्तमायु। इस प्रकार प्रथम आयुष्य का निश्चय कर तब मृत्यु का विचार करना। यदि पुरुष अल्पायु सिद्ध हो जावे, तो जब उसे मारकेश की दशा आवेगी, तो मारकेश के स्थान में रहने वाले पापग्रहों की दशा आवेगी, वा मारकेश के साथी ग्रह की दशा आवेगी, तब पुरुष को मृत्यु होवेगी। इसी भाँति मध्यायु और उत्तमायु की भी मृत्यु होती है।

आयुष्य के विषय में जैमिनि सूत्र में लिखा है कि यदि लग्नेश और अष्टमेश चर राशि में होवे, तो दीर्घायु होती है। वा लग्नेश और अष्टमेश स्थिर वा द्विस्वभाव राशि में होवे, तो भी दीर्घायु होती है। यदि लग्नेश और अष्टमेश चर स्थिर राशि में होवे, वा स्थिर द्विस्वभाव राशि में होवे, तो मध्यायु होती है। यदि लग्नेश और अष्टमेष स्थिरराशि में होवे वा चर द्विस्वभाव राशि में होवे तो अल्पायु होती है इसी भांति शनि चन्द्रमा लग्न और होरा से आयुष्य का निर्णय करना ॥ २-३ ॥

अलाभे पुनरेतेषां सम्बन्धेन व्ययेशितुः।
क्वचिच्छुभानां च दशास्वष्टमेशदशासु च ॥४॥

(अन्वयः) एतेषां पुनः अलाभे व्ययेशितुः सम्बन्धेन शुभानां दशा (मृत्युदा भवति) क्वचित् अष्टमेशदशासु च (निधनं भवति) ॥४॥

अर्थः—द्वादशेश, द्वादशस्थान में रहने वाले पापग्रह और द्वादशेश के साथी ग्रह कोई न होवे, तो द्वादशेश के साथी शुभग्रहों की दशा ही में मृत्यु होती है वा जो ग्रह अष्टमेश होवें उनकी दशा में भी मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

केवलानां च पापानां दशासु निधनं क्वचित्।
कल्पनीयं बुधैर्नृणां मारकाणामदर्शने ॥ ५ ॥

(अन्वयः) (पूर्वोक्तानां सर्वेषां) मारकाणां अदर्शने (सति) केवलानां पापानां दशासु च क्वचित् बुधैः नृणां निधनं कल्पनीयम् ॥५॥

अर्थः— पहिले कहे हुए सब प्रकार के मारकेशों में कोई भी न होवे, तो केवल पापग्रहों की दशा में ही मृत्यु होती है। अर्थात् इस समय तृतीय, षष्ठ और द्वादश स्थान के स्वामियों की दशा में मृत्यु होती है। चन्द्रमा और सूर्य को छोड़कर जो ग्रह मारक स्थान में रहता है वह मारक होता है। षष्ठ, अष्टम और द्वादश स्थान के स्वामी और राहु, केतु में जो ग्रह एकादश स्थान के नवांश का स्वामी होता है, वह मारकेश है। इन सबकी दशा में मृत्यु होती है। इनमें शुभग्रह की दशा में शरीरकष्ट होता है और पापग्रह की दशा में मृत्यु होती है ॥ ५ ॥

मारकैः सह सम्बन्धान्निहन्ता पापकृच्छनिः।
अतिक्रम्येतरान् सर्वान् भवत्येव न संशयः ॥ ६ ॥

(अन्वयः) पापकृत् शनिः मारकैः सह सम्बन्धात् इतरान् सर्वान् अतिक्रम्य निहन्ता भवति एव न अत्र संशयः (अस्ति) ॥ ६ ॥

अर्थः—तृतीय षष्ठ और द्वादश स्थान का पापग्रह शनि मारक स्थान के स्वामियों के सम्बन्ध से और सब मारकों को हटाकर आप मारक होता है। इस विषय में कोई सन्देह नहीं है। दशा पाँच प्रकार की होती है। दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा और प्राणदशा। अपने नवांश में लग्नेश रहे तो वह दशा उसकी शुभ होती है। लग्न का स्वामी अपने दशांश में द्रेष्काण में होवे तो वह दशा विशेष शुभ होती है लग्नेश अपने त्रिंशांश में होवे, वा अपने मित्र के त्रिंशांश में होवे तो उसकी दशा शुभ होती है। लग्न का स्वामी अपने दशांश में होवे, वा द्रेष्काण में होवे तो वह दशा विशेष शुभ होती है। लग्नेश अपने त्रिंशांश में होवे वा अपने मित्र के त्रिंशांश में होवे तो उसकी दशा शुभ होती है। लग्नेश वुद्धिस्थान के नवांश में होवे वा द्वितीय और षष्ठस्थान का स्वामी होवे वा अपने मित्र के द्रेष्काण में होवे तो उसकी दशा शुभ होती है। लग्नेश धर्मराशि के नवांश में होवे वा उसके द्वितीय और षष्ठ स्थान का स्वामी होवे वा बृहस्पति के द्रेष्काण में होवे तो उसकी दशा शुभ होती है। लग्नेश चतुर्थ और दशम के नवांश में होवे वा उसके द्वितीय और षष्ठ स्थान का स्वामी होवे, तो उसकी दशा शुभ होती है। लग्नेश के साथ यदि मंद होवे और मित्रांश में

रहे तथा मित्रग्रह की उस पर दृष्टि होवे और मित्र के द्रेष्काण में होवे तो उसकी दशा शुभ होती है। षष्ठ, अष्टम और द्वादश स्थान के स्वामियों की दशा कष्ट देती है। इनकी अन्तर्दशा कष्ट तब देती है जब मारक की दशा रहती है। मारकेश जब षष्ठेश के साथ लग्नेश होता है तब उसकी दशा में ज्वर आता है। मारकेश रोगेश और शरीरेश के साथ जब चन्द्रमा के षड्वर्ग में रहता है तब जल के दोष से अजीर्ण होता ही है। लग्नेश षष्ठेश के साथ जब बुध के षड्वर्ग में रहता है तब उसकी दशा में ज्वर आता है। मारकेश रोगेश और शरीरेश के साथ जब चन्द्रमा के षड्वर्ग में रहता है तब जल के दोष से अजीर्ण होता है। लग्नेश षष्ठेश के साथ जब बुध के षड्वर्ग में रहता है तब उसकी दशा में कफ वात की पीड़ा और आमवात का रोग होता है। सारिनाथ लग्नेश होकर जब बृहस्पति के षड्वर्ग में रहता है तब उसकी दशा में रोग होता है परन्तु ब्राह्मण को नहीं। नक्षत्रेश लग्नेश होकर यदि शुक्र के षड्वर्ग में रहे तो उसकी दशा में वायु का विकार वा सन्निपात होता है। यदि शनि, राहु और केतु रोगेश और लग्नेश के साथ होवें तो उनकी दशा में मनुष्यों को हिक्का (हुचकी) और विसूचिका (हैजा) आदि रोग होता है। इसी प्रकार भ्राता आदि भावों के स्वामी जहाँ होवें उनके षड्वर्ग सम्बन्ध से उस २ स्थान का फल कह देना।

लग्नेश और रोगेश यदि अष्टमेश के साथ होवें तो उसकी दशा में मनुष्य को शस्त्र का घाव होता है। यदि इस योग में कोई शुभग्रह का सम्बन्ध होवे तो पीड़ामात्र होती है और पापग्रह के सम्बन्ध में मृत्यु होती है। बृहस्पति के नवांश में बृहस्पति के वर्ग से और मूल के नवांश में मूल के वर्ग से रोग आदि कहना। लग्नेश का नवमांशेश और अष्टमेश यदि मेष के षड्वर्ग में हो तो वे दोनों की दशा में स्यार के काटने से मृत्यु का भय है।, वे ही दोनों यदि वृष के षड्वर्ग में होवें तो बिच्छू के काटने से मृत्यु का भय रहता है। मिथुन के वर्ग में बानर के काटने का भय रहता है। कर्क के वर्ग में गर्दभ के काटने का भय रहता है। सिंह के वर्ग में सिंह से भय रहता है। कन्या के वर्ग में भालू से भय रहता है। तुला के वर्ग में हाथी से भय रहता है। वृश्चिक के वर्ग में भी

हाथी से भय रहता है। धनु के वर्ग में रथ से भय रहता है। मकर के वर्ग में ऊँट से भय रहता है। कुम्भ के वर्ग में लंगूर से भय रहता है, और मीन के वर्ग में उन दोनों की दशा में मगर और घड़ियाल से मृत्यु का भय रहता है।

लग्नेश और अष्टमेश यदि वृषिराशि में, वा वृष के नवांश में, वा वृष के द्रेष्काण में होवे, तो उन दोनों की दशा में सांड़ से मनुष्य को प्राण जाने का भय रहता है। वे ही दोनों वृषराशि में रहकर मिथुन के नवांश में होवे तो भालू से, कर्क के नवांश में होवे तो घड़ियाल से, सिंह के नवांश में होवे तो व्याघ्र से, कन्या के नवांश में होवे तो बानर से, तुला के नवांश में होवे तो व्याघ्र से, वृश्चिक के नवांश में होवे तो भोजन, चिन्ता और खर्च से, धन के नवांश में होवे तो महिष से, मकर के नवांश में होवे तो महिष से, कुम्भ के नवांश में होवे तो लंगूर द्वारा दांत के काटने से, और मीन के नवांश में लग्नेश और अष्टमेश होवे तो हाथी से मृत्यु का भय मनुष्यों को होता है।

शरीरेश और मारकेश यदि सिंहराशि में सिंह के नवांश में रहें तो उन दोनों की दशा में मूस के काटने का भय और सर्प से मृत्यु का भय रहता है। शरीरेश और मारकेश यदि सिंहराशि में कन्या के नवांश में होवे तो उन दोनों की दशा में कफ और कम्पवायु से, तुला के नवांश में होवे तो मृत्यु, वृश्चिक के नवांश में होवे तो सर्प से, धनु के नवांश में होवे तो व्याघ्र से मृत्यु, मकर के नवांश में होवे तो गर्दभ से मृत्यु, कुम्भ के नवांश में होवे तो सिंह और राजा से, मीन के नवांश में होवे तो सारंग पक्षी से, मेष के नवांश में होवें तो स्यार से, वृष के नवांश में होवे तो कुत्ते से, मिथुन के नवांश में होवे तो लंगूर से, और कर्क के नवांश में सिंहराशि के शरीरेश और अष्टमेश होवे तो मनुष्य की घड़ियाल से मृत्यु का भय रहता है ॥ ६ ॥

इति भाषानुवादसहिते उडुदायप्रदीपे आयुर्दायाध्यायः ॥

अथ दशाफलाध्यायः ।

न दिशेयुर्ग्रहाः सर्वे स्वदशासु स्वभुक्तिषु ।
शुभाशुभफलं नृणामात्मभावानुरूपतः ॥ १ ॥

(अन्वयः) सूर्यादयः सर्वे ग्रहाः स्वदशासु स्वभुक्तिषु (च) नृणां शुभाशुभफलं आत्मभावानुरूपतः न दिशेयुः ॥ १ ॥

अर्थः—सूर्य आदि सम्पूर्ण ग्रह अपनी २ दशा और अन्तर्दशा में अपने २ स्वरूप के अनुसार मनुष्यों को शुभ और अशुभ फल नहीं देते। इस श्लोक से यह सूचित होता है कि आगे इस प्रकरण में यही बात सिद्ध की जावेगी ॥१॥

आत्मसम्बन्धिनो ये च ये वा निजसधर्मिणः ।
तेषामन्तर्दशास्वेव दिशन्ति स्वदशाफलम् ॥ २ ॥

(अन्वयः) ये (ग्रहाः) आत्मसम्बन्धिनः, वा ये च निज-सधर्मिणः (सन्ति) तेषां अन्तर्दशासु एव स्वदशाफलं दिशन्ति ॥ २ ॥

अर्थः—जो ग्रह अपने सम्बन्धी हैं, वा जो अपने समान हैं, उन्हीं की अन्तर्दशा में शुभ और अशुभ फल देते हैं। अर्थात् ग्रहों का परस्पर चार-चार प्रकार का सम्बन्ध होता है, यह बात पहले लिखी गई है। इन चारों सम्बन्धों में जिनके साथ कोई सम्बन्ध होता है, वा जो शुभ होने से शुभ दशेश के समान हैं, वा अशुभ होने से अशुभ दशेश के समान हैं, उन्हीं की दशा में शुभ अशुभ फल देते हैं ॥ २ ॥

इतरेषां दशानाथ विरुद्धफलदायिनाम् ।
तत्तत्फलानुगुण्येन फलान्यूह्यानि सूरिभिः ॥ ३ ॥

(अन्वयः) सूरिभिः इतरेषां दशानाथविरुद्धफलदायिनां (ग्रहाणां) तत्तत्फलानुगुण्येन फलानि उह्यानि ॥ ३ ॥

अर्थः—जो ग्रह दशेश से सम्बन्ध नहीं रखते, वा उसके समान नहीं हैं, किन्तु दशेश के विरुद्ध फल देने वाले हैं, उन ग्रहों की अन्तर्दशा में उनके फल के अनुसार दशेश शुभ फल देनेवाला है। परन्तु और ग्रह अशुभ फल देनेवाले

हैं तो उन ग्रहों की अन्तर्दशा में, दशेश भी शुभ फल देता है। वह स्वयं शुभाशुभ फल नहीं देता ॥ ३ ॥

स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ केन्द्रपतिः शुभम् ।
दिशेत् सोऽपि तथा नो चेदसम्बन्धेन पापकृत् ॥ ४॥

(अन्वयः) [सति सम्बन्धे] केन्द्रपतिः स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ शुभं दिशेत्, सः अपि तथा, नो चेत् असम्बन्धेन पापकृत (भवति) ॥ ४ ॥

अर्थः—केन्द्र का स्वामी अपनी दशा में सम्बन्ध रहने पर त्रिकोणेश की अन्तर्दशा में शुभ फल देता है, और त्रिकोणेश भी अपनी दशा में केन्द्र के साथ यदि सम्बन्ध होवे, तो अपनी अन्तर्दशामें शुभ फल देता है। यदि दोनों का परस्पर सम्बन्ध न होवे तो दोनों अशुभ फल देते हैं।

यहाँ पर कुछ फल प्रसंग से लिखते हैं। यदि लग्न में सूर्य, मंगल, राहु और शनि होवें, तो मन में सन्ताप रहता है, और रक्त की बीमारी रहती है, परन्तु यदि शुभग्रह होवें तो सब रोग नष्ट हो जाता है। यदि द्वितीय स्थान में रहनेवाले सब ग्रह क्रूर होवें तो धन की हानि होती है। परन्तु शुभग्रहों के रहने से शुभ होता है। सब प्रकार की ऋद्धि और वृद्धि होती है, और धन प्राप्ति होती है। तृतीय स्थान के सब ग्रह यदि पापग्रह होवें तो भाई बन्धु का नाश होता है, परन्तु यदि शुभग्रह होवें तो यशस्वी और धनी होता है। चतुर्थ स्थान के रहनेवाले पापग्रह पुरुष को बालक अवस्था में माता को कष्ट देते हैं, परन्तु शुभग्रह होवें तो सुख और राजा की ओर से सन्मान देते हैं। पञ्चम स्थान के सब पापग्रह सन्तान को नष्ट करते हैं, और यदि पञ्चम में मंगल होवे तो कुपुत्र (कपूत) पैदा होता है। परन्तु यदि वे सब शुभग्रह होवें तो पुत्र का सुख देते हैं। षष्ठ स्थान के क्रूरग्रह मनुष्य के सब शत्रु का नाश करते हैं। परन्तु शुभग्रह महाघोर कष्ट देते हैं, और षष्ठ स्थान का चन्द्रमा मृत्यु करता है। सप्तम स्थान के क्रूरग्रह कुरूप और क्रूर स्त्री देते हैं। परन्तु शुभग्रह सुन्दरी स्त्री देते हैं, और बृहस्पति तथा शुक्र सुन्दरी और युवती भार्या देते हैं। अष्टम के शुभग्रह बड़े कष्ट देनेवाले होते हैं, और अष्टम का चन्द्रमा बड़ा ही कष्ट देता है। नवम स्थान

के पापग्रह मनुष्य को पापी बनाते हैं। परन्तु शुभग्रह धर्मिष्ठ सुशील और पुण्यवान् करते हैं। दशम स्थान के क्रूरग्रह मनुष्य को दरिद्र करते हैं। परन्तु शुभग्रह भाग्य और सुख करते हैं। एकादश स्थान के सब ग्रह राज्य और लाभ कारक होते हैं, और शुभ ग्रह हाथी घोड़ा नौकर और गृह आदि से परिपूर्ण करते हैं। द्वादश स्थान के शुभग्रह मनुष्य को दुष्ट करते हैं, दरिद्र और दुर्बल करते हैं। यहाँ इतना और समझना उचित है कि यदि राशि का स्वामी बलवान् होवे तो राशि का फल सम्पूर्ण होता है। यदि वह नीच का होवे तो फल में न्यूनता होती है।

प्रसङ्ग से यह भी लिख देना अनुचित न होवेगा कि किस राशि से किस फल का विचार करना—जन्मलग्न से स्वरूप का विचार करना। द्वितीय से रत्न मोती सुवर्ण रुधिर अष्ट धातु और बेचना खरीदना आदि का विचार करना। तृतीय से बहिन भाई दास और भृत्यों का विचार करना। चतुर्थ से मित्र सुख दुःख वृद्धि स्थान हानि लाभ माता गृह और ग्राम आदि का विचार करना। पञ्चम भाव से गर्भ सन्तान मन्त्र सन्धि विद्या बुद्धि और बन्धन आदि का विचार करना। षष्ठ स्थान से गौ शत्रु युद्ध सोखा क्रूरकर्म मामा भय और शंका आदि का विचार करना। सप्तम स्थान से वाणिज्य व्यवहार शत्रु के साथ विवाद हानि लाभ और स्त्री का विचार करना। अष्टम स्थान से नदी उतरना, भयंकर स्थान में जाना, शत्रु का सङ्कट होना, काटना, युद्ध और रोग का विचार करना। नवम स्थान से बावली कूप तालाब आदि का बनाना, पौसरा बैठाना, देवमन्दिर बनाना, मन्त्र दीक्षा लेना, यात्रा करना मठ और धर्मशाला बनाना, यह सब विचार करना। दशम स्थान से राज्य की मोहर, बड़ा पुण्य, स्थान, पिता, प्रयोजन, वृष्टि और आकाश के नक्षत्रों का विचार करना। एकादश स्थान से हाथी घोड़ा रथ वस्त्र धान्य सुवर्ण कन्या विद्या और धन लाभ का विचार करना। द्वादश स्थान से दान भोग विवाह त्याग यज्ञ और खेती बारी का विचार करना ॥ ४ ॥

आरम्भो राजयोगस्य भवेन्मारकभुक्तिषु।
प्रथयन्ति तमारम्य क्रमशः पापभुक्तयः ॥ ५ ॥

(अन्वयः) मारकभुक्तिषु राजयोगस्य (यदि) आरम्भः भवेत् (तदा) पापभुक्तयः तं आरभ्य (राजयोगं) प्रथयन्ति ॥ ५ ॥

अर्थः-यदि द्वतीयेश और सप्तमेश की अन्तर्दशा में राजयोग का प्रारम्भ होवे तो पापग्रह की दशायें नहीं होती, अर्थात् वह राजा तो अवश्य होता है, परन्तु उसका खजाना, वा हाथी घोड़ा, वा ग्राम भूमि आदि नहीं बढ़ते ॥ ५ ॥

तत्सम्बन्धिशुभानां च तथा पुनरसंयुजाम् ।
शुभानां तु समत्वेन संयोगो योगकारिणाम् ॥ ३ ॥

(अन्वयः) तत्-सम्बन्धिशुभानां, यथा पुनः असंयुजां योगकारिणां शुभानां तु संयोगः समत्वेन (स्यात्) ॥ ६ ॥

अर्थः-राजयोग करनेवाले ग्रहों की महादशा में उनके साथी शुभग्रहों की अन्तर्दशा हो, वा राजयोग करनेवाले ग्रहों की अन्तर्दशा हो, दोनों ही में शुभ-फल समान होता है। इसी भाँति पापग्रह की महदशा में, उसके साथी पापग्रह की अन्तर्दशा हो, वा उसके साथ न रहनेवाले पापग्रह की अन्तर्दशा हो, दोनों ही में अशुभ फल समान होता है ॥ ६ ॥

शुभस्याय प्रसक्तस्य दशायां योगकारकाः ।
स्वभुक्तिषु प्रयच्छन्ति कुत्रचिद्योगजं फलम् ॥ ७ ॥

(अन्वयः) अस्य शुभस्य दशायां योगकारकाः (ग्रहाः) स्वभुक्तिषु कुत्रचित् योगजं फलं प्रयच्छन्ति ॥ ७ ॥

अर्थः-राजयोग करने वाले शुभग्रह की महादशा में उसके साथी राजयोग करने वाले शुभग्रह अपनी २ अन्तर्दशा में कदाचित् राजयोग करने वाले ग्रह की महादशा में जब राजयोग करनेवाले ग्रह की अन्तर्दशा आती है तब वह अपना फल देती है ॥ ७ ॥

तमोग्रहौ शुभारूढावसम्बन्धेन केनचित् ।
अन्तर्दशानुसारेण भवेतां योगकारकौ ॥८॥

(अन्वयः) तमोग्रहौ केनचित् असम्बन्धेन (यदि) शुभारूढौ भवेताम् (तदा) अन्तर्दशानुसारेण योगकारकौ भवेताम् ॥ ८ ॥

अर्थः—किसी राजयोग कारक ग्रह के साथ सम्बन्ध न रहने के कारण राजयोग न करनेवाले राहु और केतु यदि प्रथम चतुर्थ सप्तम दशम पञ्चम और नवम स्थान में से कहीं रहें तो राजयोग कारक ग्रह की जब अन्तर्दशा आवेगी तभी राजयोगका फल करते हैं। उसमें भी शुभग्रह की अन्तर्दशा में शुभ, अशुभ ग्रह की अन्तर्दशा में अशुभ फल करते हैं ॥ ८ ॥

अथ मिश्रकाध्यायः ।

पापा यदि दशानाथाः शुभानां तदसंयुजाम् ।
भुक्तयः पापफलदास्तत्संयुक्शुभभुक्तयः ॥१॥
भवन्ति मिश्रफलदा भुक्तयो योगकारिणाम् ।
अत्यन्तपापफलदा भवन्ति तदसंयुजाम् ॥२॥

(अन्वयः) दशानाथाः यदि पापाः (स्युः तदा) तत्संयुक्शुभभुक्तयः मिश्रफलदाः भवन्ति, तदसंयुजां योगकारिणां भुक्तयः (तु) अत्यन्तपापफलदाः भवन्ति ॥ १–२ ॥

अर्थः—यदि महादशा का स्वामी पापग्रह होवे तो उसके साथ सम्बन्ध न रखनेवाले पापग्रहों की अन्तर्दशा अशुभ फल देती है, उसके (दशेश के) साथ सम्बन्ध रखने वाले शुभग्रहों की अन्तर्दशा मिश्रित (कुछ शुभ और कुछ अशुभ) फल देती है, उसके साथ सम्बन्ध न रखने वाले और राजयोग कारक पापग्रहों की अन्तर्दशा महाकष्ट देती है ॥ १–२ ॥

सत्यपि स्वेन सम्बन्धे न हन्ति शुभभुक्तिषु ।
हन्ति सत्यप्यसम्बन्धे मारकः पापभुक्तिषु ॥ ३ ॥

(अन्वयः) मारकः स्वेन सम्बन्धे सति अपि शुभभुक्तिषु न हन्ति, सति अपि असम्बन्धे पापभुक्तिषु (तु) हन्ति (एव) ॥ ३ ॥

अर्थः—मारक ग्रह के साथ यदि शुभग्रह का सम्बन्ध होवे, तो भी शुभग्रह की दशा में मारक मनुष्य का प्राण नहीं लेता, और अपने साथ सम्बन्ध न रहने पर भी पापग्रह की दशा में मारक ग्रह मनुष्य का प्राण लेता ही है। इससे मारकेश की दशा में शुभ और पापग्रह की अन्तर्दशा ही मारक और रक्षक है उसके साथ सम्बन्ध कुछ नहीं कर सकता ॥ ३ ॥

परस्परदशायां स्वभुक्तौ सूर्यजभार्गवौ ।
व्यत्ययेन विशेषेण प्रदिशेतां शुभाशुभम् ॥ ४ ॥

(अन्वयः) सूर्यजभार्गवौ परस्परदशायां स्वभुक्तौ विशेषेण वैपरीत्येन शुभाशुभं प्रदिशेताम् ॥ ४ ॥

अर्थः—शनि और शुक्र दोनों एक ही महादशा में दूसरे की अन्तर्दशा आने पर अवश्य ही उलट पुलटकर शुभ और अशुभ फल देते हैं। तात्पर्य यह है कि यदि शुक्र की महादशा में शनि की अन्तर्दशा आवे, तो शुक्र की दशा का फल नहीं किन्तु उसके बदले में शनि की दशा का अशुभ फल ही होता है। इसी प्रकार शनि की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा आवे तो शनि की दशा का अशुभ फल नहीं होता किन्तु शुभ फल होता है ॥ ४ ॥

कर्मलग्नाधिनेतारावन्योऽन्याश्रयसंस्थितौ ।
राजयोगाविति प्रोक्तं विख्यातो विजयी भवेत् ॥५॥

(अन्वयः) कर्मलग्नाधिनेतारौ अन्योन्याश्रयसंस्थितौ (यदि तदा) राजयोगो इति प्रोक्तं (तथा सति जातः) विख्यातःविजयी(च)भवेत्॥५॥

अर्थः—यदि दशमेश लग्नेश के स्थान में होवे तो दोनों राजयोग करने वाले होते हैं। इस योग में उत्पन्न पुरुष जगत् में प्रसिद्ध और संग्राम में विजय करने वाला होता है ॥ ५ ॥

धर्मकर्माधिनेतारावन्योन्याश्रयसंस्थितौ ।
राजयोगाविति प्रोक्तं विख्यातो विजयी भवेत् ॥ ६ ॥

(अन्वयः) धर्मकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयसंस्थितौ (यदि तदा) राजयोगौ इति प्रोक्तं (तथा सति जातः) विख्यातः विजयी (च) भवेत् ॥ ६ ॥

अर्थः—यदि नवमेश दशमेश के स्थान में होवे, वा दशमेश नवमेश के स्थान में होवे तो दोनों राजयोग करने वाले होते हैं। इस योग में उत्पन्न पुरुष जगत् में प्रसिद्ध और संग्राम में विजय पाने वाला होता है।

यहाँ पर अवसर देख ग्रहों के स्वाभाविक फल और उनके शान्ति के उपाय लिख देते हैं। राज्य मूंगा लाल वस्त्र माणिक्य राज वन पर्वत खेत और पिता का करने वाला सूर्य है। माता मन का सन्तोष सुगन्ध रस ऊख गेहूँ खार पृथ्वी दाँत शक्ति कार्य धान्य और रजत आदि का करने वाला चन्द्रमा है। बल गृह भूमि पुत्र शील चोरी रोग ब्रह्मतेज भ्राता पराक्रम अग्नि साहस और राजा को शत्रु करने वाला मंगल है। ज्योतिष मामा गणित नाचना वैद्य हास्य भय लक्ष्मी और कलायें कौशल आदि करने वाला बुध है। अपना निज का कर्म, यज्ञ करना, देवता ब्राह्मण धन गृह सुवर्ण वस्त्र पुत्र मित्र और आन्दोलन आदि करने वाला बृहस्पति है। स्त्री कामीपन सुख गीत शास्त्र काव्य पुष्प सुकुमारता यौवन अलंकार रत्न सवारी अभिमान मोती धन कविता और मधुर आदि रस का करने वाला शुक्र है। भैंसा घोड़ा हाथी तेल वस्त्र शृङ्गार विदेश यात्रा काष्ठ शस्त्र शूद्र नीलम ब्राह्मण केश घाव शूलरोग दासी दास और आयुष्य आदि का करने वाला शनि है। विदेशयात्रा समय सर्प रात्रि और द्यूत आदि करने वाला राहु है। घाव चर्मरोग शूल फोड़ा क्षुधा और पीड़ा आदि करने वाला केतु है।

ग्रहशान्ति दान। मानिक, गेहूँ, लाल गौ, और बछवा, लाल वस्त्र, घी, सुवर्ण और ताम्र के दान से सूर्य प्रसन्न होता है। शंख, सफेद चँवर, कपूर, मोती, सफेद वस्त्र, जोड़ा यज्ञोपवीत, सफेद बैल, चाँदी और घी का भरा घड़ा के दान से चन्द्रमा सन्तुष्ट होता है। मूँगा, गेहूँ, मसुरी, लाल बैल, सुवर्ण, लाल वस्त्र, लाल कनईल का फूल और ताँबा के दान से मंगल सन्तुष्ट होता है। नीला वस्त्र, फल, काँसा, मूंगा, घी, चाँदी, पुष्प, दासी और हाथी दांत का दान बुध को सन्तुष्ट करता है। चीनी, हरदी, घोड़ा, पीला धान, पीला वस्त्र, पुखराज, नवरत्न और सुवर्ण के दान से बृहस्पति प्रसन्न होता है। रंग त्रिरंगा वस्त्र, सफेद घोड़ा, सफेद गौ, हीरा, चाँदी, सुवर्ण, चावल, सफेद चन्दन और घी के दान से शुक्र प्रसन्न होता है। उड़द, तेल, नीलम, तिल, कुलथी, भैंसा, लोहा और काली

गौ के दान से शनि प्रसन्न होता है। गोमेद, नीला वस्त्र, काला कम्बल, तिल, तेल और लोहा के दान से राहु सन्तुष्ट होता है। वैडूर्य, तिल, तेल, कस्तूरी और नीला वस्त्र के दान से केतु सन्तुष्ट होता है। जप, होम, स्तुति और ब्राह्मणों की पूजा से कुदशा का फल नहीं होता ॥ ६ ॥

इति भाषानुवादसहिते उडुदायप्रदीपे मिश्रकाध्यायः ॥
समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

अथ ग्रहाणां दशाफलानि ।

तदुक्तं चन्द्राभरणजातके ।

तत्रादौ सूर्यदशाफलम् ।

क्षोभङ्करार्तिस्वजनैर्विरोधमुद्वेगरोगार्थविनाशनं च ।
प्रवासव्याध्याधिकृताभिघातं रवेर्दशा देहभृतां तनोति ॥ १ ॥
उद्विग्नचित्तपरिखेदितवित्तनाशं व्याधि प्रवासमरणं च जनैर्विरोधम् ।
संक्षोभितस्वजनबन्धुवियोगमेवं सूर्ये दशा भवति राजकुलाभिघातम् ॥२॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

नृपकुलाद्गुरुतां विभवव्ययं तनुरुजं बहुपित्तसमुद्भवम् ।
स्वजनविग्रहमातनुतेतरां रविदशान्तरगा दिनकृद्दशा ॥ १ ॥
रिपुजयं च धनस्य समागमं स्वजनसङ्गतिमङ्गनिरोगताम् ।
वितनुते शुभमङ्गभृतामसौ रविदशान्तरगा शशिनोदशा ॥ २ ॥
अरुणवस्त्रसुवर्णमणिर्गणप्रभृतिलाभकरी रणकारिका ।
विजयदा च भवेदिह देहिनां रविदशान्तरगाऽवनिभूदशा ॥ ३ ॥
व्यसनशोकभयातुरता धनक्षयवियोगविपत्तिविधायिनी ।
भवति सौख्यहरी च गदप्रदा रविदशान्तरगा तमसो दशा ॥ ४ ॥
नृपतिमानधनागमकारिणी सुललमनोरथपूरणमञ्जसा ।
सदसि वाक्पटुता विदधात्यलं रविदशान्तरगा च गुरोर्दशा ॥ ५ ॥

अवनिपालभयं नृजनोदयं सततदुःखविदेशगमं भ्रमम् ।
कलहमाशु करोति धनव्ययं रविदशान्तरगां रविभूदशा ॥ ६ ॥
विभवहानिकरी गददायिनि पतनकृद्रिपुसम्भ्रमभीतिदा ।
ग्रहविघातकरी किल जायते रविदशान्तरगा शशिभूदशा ॥ ७ ॥
तनयसंहतिमिष्टधनच्चयं कलहमर्थहर्ति तनुपीडनम् ।
अशुभमाशु ददाति सुदारुणं रविदशान्तरगा शिखिनो दशा ॥ ८ ॥
विऽलशूलसमीरणपीडनं गलगदानुविकृष्ठशिरोर्तिदम् ।
वितरतीह महापदमङ्गिनां रविदशान्तरगा च भृगोर्दशा ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

उद्वेगोऽथ बलं वित्तं दारार्तिः शिरसि व्यथा ।
ब्राह्मणेन विवादश्च सूर्यः स्वविदशां गतः ॥ १ ॥
उद्वेगं कलहं चित्तपीडां स्वहृदि चाद्भुतम् ।
मणिमुक्तादिनाशश्च विदशासु रवेः शशी ॥ २ ॥
राजभीतिं शस्त्रभीतिं बन्धनं बहु संकटम् ।
शत्रुवह्निकृता पीडा विदशासु रवेः कुजः ॥ ३ ॥
श्लेष्मव्याधिं शस्त्रभीतिं धनहानिं महद्भयम् ।
राजभङ्गस्तथा त्रासो विदशासु रवेस्तमः ॥ ४ ॥
शत्रुनाशं जयं वृद्धिं वस्त्रहेमादिभूषणम् ।
अश्वयानादि ददते गोधनं च रवेर्गुरुः ॥ ५ ॥
धनहानिः पशोः पीडा महद्वेगो महारुजः ।
अशुभं सर्वमाप्नोति विदशासु रवेः शनिः ॥ ६ ॥
विद्यालाभो बन्धुसङ्गो भोज्यप्राप्तिर्धनागमः ।
धर्मलाभो नृपात् पूजा विदशासु रवेर्बुधः ॥ ७ ॥
प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रहः ।
शत्रुणा च महावादी विदशासु रवेः शिखी ॥ ८ ॥
दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यल्पो भवेदिह ।
स्वल्पा च सुखसम्पत्तिर्विदशासु रवेर्भृगुः ॥ ९ ॥

इति रवेर्विदशाफलम् ।

अथ चन्द्रदशाफलम् ।

राजाभिषेकचरत्वाहनवस्त्रयानक्षेमप्रतापबलवीर्यसुखान्वितश्च ।
निद्रान्नपानशयनासनभोजनानि चन्द्रो ददाति वरकाञ्चनभूमिलाभम् ॥ १ ॥
सौख्यं विभूतिः सुतराज्यलाभं कान्तिः प्रतापं तनुवीर्यवृद्धिम् ।
मिष्टान्नपानानि सुखागमं च चान्द्री दशा यच्छन्ति मङ्गलानि ॥ २ ॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

स्वपक्षवैरं व्यवसायलाभं कन्यादिजन्माम्बरभूषणानि ।
स्त्रीसङ्गमो यच्छति वार्थसिद्धिमिन्दोर्दशामध्यगतः शशाङ्कः ॥ १ ॥
चौरादिभीतिं ज्वरदाहपित्तप्रकोपरक्तार्तिमनर्थपंक्तिम् ।
जनो विधत्ते चलता च दुःखं इन्दोर्दशामध्यगतो महीजः ॥ २ ॥
सर्वासुखंवह्निनरेन्द्रचौरवैरिव्रजेभ्यो वितर्तं भयञ्च ।
दत्ते क्षयं देहचतुष्पदानामिन्दोर्दशामध्यगतोऽथ राहुः ॥ ३ ॥
वादे जयं राजसभासु मानं सौख्यानि धर्मार्थमनोऽभिवाञ्छा ।
संप्रापयन्त्येव हि तं च सर्वं इन्दोर्दशामध्यगतो हि जीवः ॥ ४ ॥
महाग्रहाच्छत्रुभयं च शोकोद्वेगौ क्षय बन्धुवधूसुतानाम् ।
चतुष्पदानां हननं च कुर्यादिन्दोर्दशामध्यगतो हि मन्दः ॥ ५ ॥
सर्वासुखं धान्यसुतादिप्राप्तिं सौख्यादिलाभं विभवं सुबुद्धिम् ।
स्त्रीणां सुखं बन्धुसुखं च नूनमिन्दोर्दशामध्यगतो बुधश्च ॥ ६ ॥
स्तम्बेरमाश्व द्विपदादिवृद्धिः महद्विभावे व्यवसायलब्धम् ।
शरीरपीडा च ज्वरादिकोपमिन्दोर्दशामध्यगतश्च केतुः ॥ ७ ॥
माणिक्यमुक्ताफलरत्नशुक्लकृपाणकालाभमनर्थं हानिः ।
स्त्रीणां सुखं सन्तनुते च कन्यामिन्दोर्दशामध्यगतो हि शुक्रः ॥ ८ ॥
ऐश्वर्यमुद्राधनधान्यपुत्रप्राप्ती रिपुभ्यो विजयं सुबुद्धिम् ।
मित्रोत्थसौख्यानि करोति नूनमिन्दोर्दशामध्यगतो हि भानुः ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

भूमोज्यं धनसम्प्राप्तिः राजपूजा महत्सुखम् ।
महालाभः स्त्रियो भोगः विदशासु स्वयं शशी ॥ १ ॥
मतिवृद्धिर्महापूज्या सुखं बन्धुजनैः सह ।
धनागमं शत्रुभयं चन्द्रान्तरगतः कुजः ॥ २ ॥
भवेत्कल्याणसम्पत्ती राज्यवित्तसमागमः ।
शुभमीरल्पमृत्युश्च चन्द्रान्तरगतस्तमः ॥ ३ ॥
वस्त्रलाभो महातेजौ ब्रह्मज्ञानं च सद्गुरोः ।
वस्त्रालङ्करणावाप्तिश्चन्द्रान्तरगतो गुरुः ॥ ४ ॥
दुर्दिनैर्लभते पीडां वातपित्ताद्विशेषतः ।
धनधान्ययशोहानिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शनिः ॥ ५ ॥
पुत्रजन्महयप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नतिः ।
शुक्लवस्त्रान्नलाभश्च चन्द्रचन्द्रान्तरे बुधः ॥ ६ ॥
ब्राह्मणेन समं युद्धमपमृत्युः सुखक्षयः ।
सर्वत्र जायते क्लेशश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शिखी ॥ ७ ॥
धनलाभो महासौख्यं कन्याजन्म सुभोजनम् ।
प्रीतिश्च सर्वलोकेभ्यश्चन्द्रचन्द्रान्तरे भृगुः ॥ ८ ॥
अन्नागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानिः सुखागमः ।
सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे रविः ॥ ९ ॥

अथ भौमदशाफलम् ।

विषाग्निशस्त्रग्रहदोषपीडां रक्तादिदोषं सुहृदां विरोधः ।
मूर्च्छा भयं बन्धुजनक्षयञ्च तनोति भूमेः सुतदुर्दशेयम् ॥ १ ॥
भौमे दशायां लभते नृपाग्निचौराहवादिरिपभीतिम् ।
मूर्च्छा शिरोविदोषाः शीर्षच्छेदो मरणश्चापि ॥ २ ॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

बन्धुजनेन विरोधयजस्त्रं संग्रामं रिपुभीः प्रतिघस्त्रम् ।
स्त्रीसङ्गाजनयति तनुपीडां भौमदशान्तरगोऽवनिसूनुः ॥ १ ॥
परदेशे गमनं रिपुभीतिं चौरोपद्रवमग्निभयञ्च ।
कुरुते द्रव्योपहतिक्लेशं भौमदशान्तरगः किल राहुः ॥ २ ॥
किञ्चिद्भीति भूपात्कुर्याद्गुरुदेवार्चनयात्रा पुण्यम् ।
लाभं पीताद्रक्ताद्वस्त्राद्भौमदशान्तरगः किल सूरिः ॥ ३ ॥
शोकोद्वेगौ रोगं मृत्युं सर्पविषाग्निभयं च विधत्ते ।
बन्धुवियोगं ह्रश्रीनाशं भौमदशान्तरगो रविसूनुः ॥ ४ ॥
उग्रव्याधिभवां तनुपीडां मनसः क्षोभं वैरिविवादम् ।
विभवविनाशं कुरुतेऽत्यर्थं भौमदशान्तरगो विधुसूनुः ॥५॥
बन्धुजनेन विरोधमजस्त्रं परदेशादिगमं रिपुभीतिम् ।
सर्पभयं क्लेशं च प्रकुरुते भौमदशान्तरगः किल केतुः ॥६॥
शस्त्रात्पीडामुच्चात्पतनं बन्धुवियोगं स्वजनप्रशान्तम् ।
अशने भीतिं विदधात्युच्चैर्भौमदशान्तरगो भृगुपुत्रः ॥ ७ ॥
शीर्षस्फोटं भूपतिभीतिं लक्ष्मीलाभं तनुबाधां वा ।
साहसकर्मणि रक्तं कुर्याद्भौमदशान्तरगो दिनराजः ॥ ८ ॥
सङ्गं मित्रैः शत्रोर्हानिं रत्नादीनां लाभसुखं वा ।
संतनुते मुक्तादिकलब्धिं भौमदशान्तरगो हिमरश्मिः ॥ ९॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

शत्रुभीतिं कलिं घोरमकस्माज्जायते भयम् ।
रक्तस्रावोऽपमृत्युश्च विदशासु स्वयं कुजः ॥ १ ॥
बन्धनं राजभङ्गं च धनहानिः कुभोजनम् ।
कलहः शत्रुभिर्नित्यं भौमभौमान्तरे तमः ॥ २ ॥

मतिनाशं तथा दुःखं सन्तापकलहो भवेत् ।
विफलं चिन्तितं सर्वं भौमभौमान्तरे गुरुः ॥ ३ ॥
स्वामिनाशस्तथा पीडा धनहानिर्महद्भयम् ।
वैकल्यं कलहस्त्रासो भौमभौमान्तरे शनिः ॥ ४ ॥
सर्वथा बुद्धिनाशश्च धनहानिर्ज्वरं तनौ ।
वस्त्रान्नसुहृदां नाशो भौमभौमान्तरे बुधः ॥ ५ ॥
आलस्यं च शिरःपीडा पापरोगापमृत्यु कृत् ।
राजभीतिः शस्त्रघातो भौमभौमान्तरे शिखी ॥ ६ ॥
चाण्डालात्संकटं त्रासो राजशस्त्रभयं भवेत् ।
अतिसारोऽथ वमनं भौमभौमान्तरे भृगुः ॥ ७ ॥
भूमिलाभोऽर्थसम्पत्तिः सन्तोषो मित्रसङ्गतिः ।
सर्वत्र सुखमाप्नोति भौमभौमान्तरे रविः ॥ ८ ॥
याम्यां दिशि भवेल्लाभः सितवस्त्र विभूषणम् ।
संसिद्धिः सर्वकार्याणां भौमभौमान्तरे शशी ॥ ९ ॥

इति भौमविदशाफलम् ।

अथ राहुदशाफलम् ।

दरिद्रतां मानससौख्यभावं सन्तोषहीनत्वमतीव रोगम् ।
सन्तापमर्थक्षयवैरिवादो महापदं राहुदशा विधत्ते ॥ १ ॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

सम्पदां हरणमाशितक्षयं बन्धुशोकभवरोगविरुद्धम् ।
आत्मजोन्यरतिमित्रलाघवं राहुरेष दितिमूदशां गतः ॥ १ ॥
देवसद्गुरुपदार्चने रतं कामितार्थफलमातनोति च ।
दुःखहानिमथ सम्प्रतापजं जीव एष दितिभूदशां गतः ॥ २ ॥
वायुपित्त जनिताङ्गबाधनं देशमित्रवनितावियोजनम् ।
शत्रुपत्यनुदिनं कलिं रतिं मन्द एव दितिभूदशां गतः ॥ ३ ॥

सम्पदापदमनर्थलंघन बन्धुसूनुवनितादिसंगमम् ।
धर्मबुद्धि मनघं करोत्यहो सौम्य एष दितिभूदशां गतः ॥ ४ ॥
आतपं वितनुते रविग्रहं तापवह्निपतनोग्रदुःखितम् ।
वेदबन्धनकशादिताडनं केतुरेष दितिभूदशां गतः ॥ ५ ॥
उत्तमैश्च सह संगतिर्धना-न्यास मत्र विदधाति कामिनाम् ।
साधुप्रीतिजलकेलिदारुणं शुक्र एष दितिभूदशां गतः ॥ ६ ॥
भूपअग्निरिपुचौरसङ्कटं बन्धुभिर्व्यसनमर्थहीनताम् ।
लाभयेच्च जलतापविक्लवो भानुरेष दितिभूदशां गतः ॥ ७ ॥
भार्यया सह कलिर्धनव्ययं विग्रहं स्वसहजेरहर्निशम् ।
स्वंसताहमितिहातनोत्यलं सोम एष दितिभूदशां गतः ॥ ८ ॥
शस्त्रपातजलवह्निदुर्जनैर्व्यालभूपतिभयं करोत्यलम् ।
वित्तनाशमथ देहभेदनं भौम एष दितिभूदशां गतः ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

बन्धनं बहुधा रोगो बहुघातं सुहृन्द्वयम् ।
अकस्मादापदो यान्ति राहोर्वह्नेर्जलाद्भयम् ॥ १ ॥
सर्वत्र लभते लाभं गजाश्वं च धनागमम् ।
राजसम्मानदं चैव राहो राह्वन्तरा गुरुः ॥ २ ॥
बन्धनं जायते घोरं सुखहानिर्महद्भयम् ।
प्रत्यहं वातपीड़ा च राहो राह्वन्तरा शनिः ॥ ३ ॥
सर्वत्र बहुधा लाभः स्त्रीसमाश्च विशेषतः ।
परदेशगतः सिद्धी राहो राह्वन्तरा बुधः ॥ ४ ॥
बुद्धिनाशो भयं विघ्नं धनहानिर्महद्भयम् ।
सर्वत्र कलहोद्वेगो राहो राह्वन्तरा शिखी ॥ ५ ॥
योगिनीभ्यो भयं भूयादश्वहानिः कुभोजनम् ।
स्त्रीनाशः कुलजं शोकं राहो राह्वन्तरा सितः ॥ ६ ॥
ज्वररोगमहाभीतीः पुत्रपौत्रादिपीडनम् ।
[illegible] राहो राह्वन्तरा रविः ॥ ७ ॥

उद्वेगः कलहं चिन्ता मानहानिर्महद्भयम् ।
पित्ताद्वैकल्यता देहे राहो राह्वन्तरा शशि ॥ ८ ॥
भगन्दरकृता पीडा रक्तपित्त प्रपीडनम् ।
अर्थहानिर्महोद्वेगं राहो राह्वन्तरा कुजः ॥ ९ ॥

इति राहुप्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

अथगुरुदशाफलम् ।

नृपप्रसादं धनधान्यपुत्रकलत्रमित्रार्थनृरत्नलाभम् ।
नीरोगतां शत्रुजयं च सौख्यं गुरोर्दशा वाञ्छितमातनोति ॥ १ ॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

वृद्धि सदा सङ्गमपुण्यविचारसिन्धुकल्याणरत्नतनयं वरभूमिलाभम् ।
सौभाग्यभाग्यनृपमानयशोर्थिनां च सूरेर्दशान्तरगतः प्रकरोति जीवः ॥ १ ॥
वेश्याङ्गनाऽशसनपारधिसिन्धुयानद्युतानि भूतिमतिवामससन्निपातम् ।
धर्मार्थतापनिरतं कलहं च रोगं सूरेर्दशान्तरगतः प्रकरोति मन्दः ॥ २ ॥
आनन्दमन्दिर उदारतया समेतं धर्मान्वितं स्वगुरुदेवपदानुरक्तम् ।
स्वसज्जनं स्वजनवैरिसमं सुबुद्धिं सूरेर्दशान्तरगतः प्रकरोति सौम्यः ॥ ३ ॥
उद्वेगतां स्वकुलबन्धुसुतादितापं देशान्तरे गमनदुःखशताभिभूतम् ।
वैचित्र्यमूढपतितों बहुपत्यसङ्गं सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति केतुः ॥ ४ ॥
आपत्तिजातमरिभिः कृतचित्तलोपभावं कलिः स्वजनबन्धुजनैश्च सार्द्धम् ।
अस्वस्थतां गदगणेन शरीरबाधा सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति शुक्रः ॥ ५ ॥
सौख्यानि राजकुलतो विपुला सुबुद्धिः संग्राममित्रबहुवैरिशरीरघातम् ।
पूजामथान्ययुवतिं गुरुभिश्च सङ्गं सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति भानुः ॥६॥
राज्याभिषेकमुदयं सकलाङ्गदोषविनाशनमर्थहर्ति प्रमादम् ।
प्राप्तिं तनूद्भवकरीवरवर्णिनीनां सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति चन्द्रः ॥ ७ ॥
नीरोगभावमतिसौख्यमपारभोगान् कीर्तिप्रतापतपवित्तसमार्जनश्च ।
रक्तम्बरप्रवहणामतिवस्तुलाभं सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति भौमः ॥ ८ ॥
वित्तक्षयं च तनुतीव्रशरीररोगान् मृत्युं प्रवासजनितं गुरुकष्टभावम् ।
वैरात्सुहृद्भिरभितो धनधान्यहानि सूरेर्दशान्तरगतश्च करोति राहुः ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

हेमलाभो जनं वृद्धिः कल्याणं च फलोदयः ।
बहुमावं गृहे बुद्धिं जीवजीवान्तरा गुरुः ॥ १ ॥
गोभूमिहयलाभः स्यात्सर्वत्र सुखसाधनम् ।
सङ्ग्रहो ह्यन्नपानादिगुरोर्गुर्वन्तरा शनिः ॥ २ ॥
विद्यालाभो वस्त्रलाभो ज्ञानलाभः समौक्तिकः ।
सुहृदां सङ्गमस्नेहौ जीवजीवान्तरा बुधः ॥ ३ ॥
जलभीतिस्तथा चौर्यं बन्धनं कलहो भवेत् ।
अल्पमृत्युर्भयं घोरं जीवजीवान्तरे ध्वजः ॥ ४ ॥
नानाविद्यार्थसम्प्राप्तिर्हेमवस्त्रविभूषणम् ।
लभते क्षेमसन्तोषं जीवजीवान्तरे कविः ॥ ५ ॥
नृपाल्लाभस्तथा मित्र पितृतोमातृतोऽपि च ।
सर्वत्र लभते पूजां जीवजीवान्तरा रविः ॥ ६ ॥
सर्वदुःखविमोक्षश्च मुक्तालाभो हयस्य च ।
सिद्धयन्ति सर्वकार्याणि जीवजीवान्तरे शशी ॥ ७ ॥
शत्रुभीतिर्गुदे पीडा वह्निमान्द्यमजीर्णता ।
पीडा शत्रुकृता भूरिजीवजीवान्तरे कुजः ॥ ८ ॥
चाण्डालेन विरोधः स्याद्भयं तेभ्यो रतिग्रहः ।
कष्टं स्यात् व्याधिशत्रुभ्यो जीवजीवान्तरे तमः ॥ ९ ॥

अथ शनिदशाफलम् ।

दैन्यं विवादं स्वकुलविदेशयानं च मानं क्षितिमर्थहानिम् ।
रोगार्तमापद्भयतापपीडां दशा शनेर्दुःखमिदं करोति ॥ १ ॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

मतेर्विघातं गमनं विदेशे सदैव तन्द्री च श्रमार्थविप्लवम् ।
तनूजदारैः कलहं गदं तनौ शनैर्दशायां जनयेद्गतः शनिः ॥ १ ॥
सुखं जयं पुत्रकलत्रसम्पदं क्रयाणकाकाष्ठधनाद्धनोदयम् ।
[illegible] शनैर्दशायां जनयेद्गतो गुरुः ॥ २ ॥

चिन्ता तनूजस्य कृते रविग्रहं शसङ्कितो प्रेतप्रदर्शनं निशि ।
रोगैर्महावातसमुद्भवैः कृतिं शनेर्दशायां जनयेद्गतो ध्वजः ॥३॥
भूपाद्धनाप्तिः स्वजनः समागमं नैरिक्षयं देहसपुष्टतो जयम् ।
जनैरुदारैः सुजनैश्च सङ्गतिं शनेर्दशायां जनयेद्गतो भृगुः ॥४॥
स्त्रीभ्यो भयं पुत्रसमृद्धिनाशं नृपाच्च बन्धार्तिकमिष्टदुष्टताम् ।
सञ्जीवसन्देहमपाररोगतां शनेर्दशायां जनयेद्गतो रविः ॥५॥
स्वबन्धुवर्गेण समं विरोधतां स्वपुत्रगोत्रस्वकलत्रविग्रहम् ।
कोपानलोद्वेगशरीरबन्धनं शनेर्दशायां जनयेद्गतः शशी ॥६॥
जीवस्य सन्देहमपाररोगतां दिवानिशं दुःखसमुद्रमग्नताम् ।
ग्रामादि देशान्तरजातविप्लवं शनेर्दशायां जनयेद्गतः कुजः ॥७॥
ज्वरादिरोगं मनसश्च विभ्रमं रक्ताद्यतीसारमनर्थपीडाम् ।
भयं रिपोरर्थविघातमञ्जसा शनेर्दशायां जनयेद्गतस्तमः ॥ ८ ॥
सम्यग् जनैः सङ्गतिमर्थसम्पदं प्रीत्यर्थपूजा निजभूमिकाननम् ।
सुखान्यशेषाणि निरोगतामलं शनेर्दशायां जनयेद्गतो गुरुः ॥९॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

देहपीडा कलिर्भीतिर्भयमन्त्यजलोकतः ।
विदेशगमनं दुःखं शनेः प्रत्यन्तरे शनिः ॥ १ ॥
बुद्धिनाशं कलिं भीतिमन्नपानादिहानिकृत् ।
धनहानिर्भयं शत्रोः शनेः प्रत्यन्तरे बुधः ॥ २ ॥
बन्धुशत्रुगृहे जातो वर्णहानिर्बहुक्षुधा ।
चित्ते चिन्ता भयं त्रासः शनेः सौरान्तरे शिखी ॥३॥
चिन्तितं फलितं वस्तु कल्याणं स्वजने जने ।
मनुष्यकृषितो लाभः शनेः सौरान्तरे भृगुः ॥ ४ ॥
राजतेजोधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः ।
ज्वरादिव्याधिपीडा च कोणे कोणान्तरा रविः ॥ ५ ॥
स्फीतबुद्धिर्महारम्भो मन्दतेजा बहुव्ययः ।
बहुस्त्रीभिः समं भोगं कोणे कोणान्तरा शशी ॥ ६ ॥

तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निर्भीतिं रिपोर्भयम ।
वातपित्तकृता पीडा कोणे कोणान्तरा कुजः ॥ ७ ॥
धनहानिर्वस्त्रनाशो भूमिनाशो भयं भवेत् ।
विदेशगमनं मृत्युः कोणे कोणान्तरे तमः ॥ ८ ॥
गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रं ह्यसमर्थो निरीक्षणम् ।
अथवा कलिमुद्वेगं शनेः सौरान्तरे गुरुः ॥ ९ ॥

अथ बुधदशाफलम् ।

दिव्याङ्गनाभूषणवस्त्रविद्यापुत्रान्ननीकाञ्चनलाभकर्मं ।
रत्नं च वस्त्रादिसमाहितं च दशा बुधस्याशु करोति पुंसाम् ॥१॥

अथान्तर्दशाफलम् ।

विविधधान्यधनोद्भवं सुखं सहजैः स्वजनैः सुकृतैश्चरितम् ।
दयितासुखमद्भुतसिद्धिचयं विदधाति बुधान्तरगः शशिजः ॥१॥
निधनं पृथुशोकगदोपहितं मनुजं मृधचौरनृपाकुलितम् ।
बहुपातकसञ्चयमधिकफलं विदधाति बुधान्तरगश्च ध्वजः ॥ २ ॥
गुरुदेवपदार्चनबुद्धि रतिं धनदानमति निरसार्थमतिम् ।
वसनाभरणाप्तिसुखाभिसुखं विदधाति बुधान्तरगश्च सितः ॥३॥
कमलाकलितं शुभबुद्धियुतं यशसा सुभगं नरमीश्वरगम् ।
अजगोमहिपीहयपूर्णगृहं विदधाति बुधान्तरगश्च रविः ॥ ४ ॥
क्षयकुष्टभगन्दरमुख्यगदैः परिभूततनुं तनुमन्तमसौ ।
विषसर्पजलाग्निनृपालभयं विदधाति बुधान्तरगश्च शशी ॥ ५ ॥
हृदयोदरकण्ठशिरःप्रभवै रुधिरोत्थविकारभवैः क्रिमिजम् ।
नरमन्तकवैरिभयातुरितं विदधाति बुधान्तरगश्च कुजः ॥ ६ ॥
रिपुशस्त्रमहीपतिचौरगदानकभीतिहितं नृपलब्धधनम् ।
पुरुषं परदाररतिं कुमतिं विदधाति बुधान्तरगश्च तमः ॥ ७ ॥
भयरोगविवर्जितमीश्वरतासुभगं नृपवल्लभतासहितम् ।
सुकृतैकरतिं नरमर्थपतिं विदधाति बुधान्तरगश्च गुरुः ॥ ८ ॥
अभिलापवरं सुखनीचरतिं बहुलोभकुकर्मणि बुद्धिरतिम् ।
नरमुख्यगृहीतमनर्थरुचिं विदधाति बुधान्तरगश्च शनिः ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

बुद्धिर्विद्यार्थलाभो वा वस्त्रलाभो महत्सुखम् ।
स्वर्णादिधनलाभः स्यात्सौम्यसौम्यान्तरा बुधः ॥ १ ॥
कठिनान्नस्य सम्प्राप्तिरुदरे रोगसम्भवः ।
कामलं रक्तपित्तश्च सौम्यसौम्यान्तरा शिखी ॥ २ ॥
उत्तरस्यां भवेल्लाभः हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ।
अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यान्तरा भृगुः ॥ ३ ॥
तेजोहानिर्भवेद्रोगस्तनुपीडा तु मार्दवी ।
जायते चित्तवैकल्यं सौम्ये सौम्यान्तरा रविः ॥ ४ ॥
स्त्रीलाभश्चार्थसम्पत्तिः कन्यालाभो महाधनम् ।
लभते सर्वतः सौख्यं सौम्ये सौम्यान्तरा शशी ॥ ५ ॥
धर्मधीधनसम्प्राप्तिश्चौराग्न्यादिप्रपीडनम् ।
रक्तस्रावः शस्त्रघातः सौम्ये सौम्यान्तरा कुजः ॥ ६ ॥
कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसम्भवः ।
रुजशस्त्रकृता भीतिः सौम्ये सौम्यान्तरा तमः ॥ ७ ॥
राज्यं राज्याधिकारो वा पूजा राजसमुद्भवा ।
विद्याधनान्नगुल्मश्च सौम्ये सौम्यान्तरा गुरुः ॥ ८ ॥
वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवः ।
धननाशमवाप्नोति सौम्ये सौम्यान्तरा शनिः ॥ ९ ॥

अथ केतुदशाफलम् ।

विषादकर्त्री धनधान्यहर्त्री सर्वापदां मूलमनर्थदात्री ।
भयङ्करी रोगविपद्विधात्री केतोर्दशा स्यात्किल जीवहन्त्री ॥ १ ॥

अथान्तर्दशाफलम्

पुत्रार्थनाशं रिपुविग्रहं च म्लेच्छादिना सद्व्यसनं महोग्रम् ।
दुष्टाङ्गनाभिः सह तीव्रकोपं केतोर्दशायां प्रकरोति केतुः ॥ १ ॥
स्वबान्धवैर्नित्यमुदग्रवातमुद्वेगवादं धनधान्यहानिम् ।
स्थानं [illegible] केतोर्दशायां प्रकरोति [illegible] ॥ २ ॥

स्वबान्धवैर्नित्यविवादमेव धनक्षयं धान्यसुखादिहानिम् ।
भयं नृपेभ्यो कुजनैश्च नित्यं केतोर्दशायां प्रकरोति भानुः ॥
महाज्वरं जन्म च कन्यकानां दाहं तथाग्नेर्निजदेशभङ्ग
भयं रिपुभ्यो नृपदर्शनेभ्यो केतोर्दशायां प्रकरोति चन्द्रः ॥
स्वबान्धवैः सार्द्धमुदग्रवादं चौराग्निभीतिं च दवाग्निदुःखम् ।
देहे गुरुत्वं सुतकोपतापं केतोर्दशायां प्रकरोति भौमः ॥ ५ ॥
नीचैर्जनैः सङ्गमथो विनाशं परस्परं क्लेशमनर्थमार्गे ।
देहस्य भङ्गः कलहः स्ववर्गे केतोर्दशायां प्रकरोति राहुः ॥ ६ ॥
सदोत्तमैः सङ्गमनं च केलिं नराधिपेभ्यो बहुमानलाभम् ।
सदूषणं सञ्जननं सुखानां केतोर्दशायां प्रकरोति जीवः ॥ ७ ॥
पित्तोद्भवां वातभवां च पीडां निचैर्विवादं सदनस्य भङ्गम् ।
देशे परस्मिन्मनसार्थहानिः केतोर्दशायां प्रकरोति मन्दः ॥ ८ ॥
घोरं विवादं निजभूमिहेतोः प्रीतिं परां बान्धवमित्रवर्गैः ।
स्वराभिभूतिं पवनाङ्गभङ्गं केतोर्दशायां प्रकरोति सौम्यः ॥ ९ ॥

अथ प्रत्यन्तर्दशाफलम् ।

आपत्समुद्भवः कस्माद्देशान्तरसमागमः ।
धननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वन्तरा शिखी ॥ १ ॥
क्लेशभीत्यर्थनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ।
हानिश्चतुष्पदानाञ्च केतोः केत्वन्तरा भृगुः ।
मित्रैः सह विरोधश्च त्वल्पमृत्युः पराजयः ।
मतिभ्रंशो विवादश्च केतोः केत्वन्तरा रविः ॥ ३ ॥
अन्ननाशो यशोहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ।
आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वन्तरा शशी ॥४॥
शस्त्रघातेन पीतेन पीडितो वह्निपीडया ।
नीचाद्भीति रिपोः शङ्का केतोः केत्वन्तरा कुजः ॥५॥
कामिनीभ्यो भयं भूपात्तथा शत्रुसमुद्भवः ।
क्षुद्रादपि भवेद्भीतिः केतोः केत्वन्तरा तमः ॥ ६ ॥